जागोरी की द्विमासिक पत्रिका
मार्च–अप्रैल 2009

हम सबला

इस अंक में

घरेलू हिंसा

घरों में हो रहे ज़ुल्मों पर ख़ामोशी अब और नहीं

हम सबला

मार्च-अप्रैल 2009

इस अंक में

हमारी बात 1

लेख

- घरेलू हिंसाः महिलाओं के मानव अधिकारों का हनन — विभूति पटेल — 2
- अदृश्य दुश्मन से संघर्ष कैसे करें? — उर्वशी बुटालिया — 7
- घरेलू हिंसा व मानसिक स्वास्थ्य — किश्वर अहमद-शिराली — 13
- घरेलू हिंसा कानूनः एक समीक्षा — अस्मिता बासु — 20

आमने-सामने

- बच्चों के साथ यौन हिंसा भी घरेलू हिंसा है — अनुजा गुप्ता — 9
- हम क्या सुनते हैं? — राहुल रॉय — 25

कहानी

- अन्नपूर्णा मंडल की आखिरी चिट्ठी — सुधा अरोड़ा — 16

कविता

- एक काली लड़की का हलफ़नामा — अमित कुमार — 6
- कुसुम का सत्याग्रह — सविता सिंह — 31
- चाची — रंजना जायसवाल — 38

संवाद

- हिंसा-अन्दर और बाहर-कब तक? — कल्पना शर्मा — 27
- हिंसा बंद करने की राह पर अग्रसर-कुछ विचार — नंदिता भाटला — 29

अभियान

- ‘घंटी बजाओ’ अभियान — 32

पाठकों के विचार

- न्याय की तलाश — रोमा व राजेश पाठक — 36

फ़िल्म समीक्षा

- दमन — जुही जैन — 34

पुस्तक समीक्षा

- औरतों के ख़िलाफ़ हिंसाः दृष्टिकोण और रणनीतियां — जुही जैन — 39

संपादन एवं अनुवाद

जुही जैन

संपादन सहयोग

जया श्रीवास्तव

कल्याणी

खुर्शीद अनवर

सीमा श्रीवास्तव

रत्नमंजरी

कवर्स

बिंदिया थापर

रेखाचित्र

प्रिया कुरियन

पेज सज्जा व मुद्रण

सिस्टम्स विज़न

दूरभाष 26811195

systemsvision@gmail.com

जागोरी JAGORI

बी 114 शिवालिक, मालवीय नगर

नई दिल्ली 110 017

ई-मेल jagori@jagori.org

वेबसाइट www.jagori.org

दूरभाष 26691219, 26691220

हेल्पलाइन 26692700

हमारी बात

संयुक्त राष्ट्र सचिव, *कोफी आनन के शब्दों में "महिलाओं के साथ हिंसा मानव अधिकार उल्लंघन का सबसे शर्मनाक व व्यापक उदाहरण है। इसकी कोई भौगोलिक, सांस्कृतिक व आर्थिक सीमाएं नहीं हैं और जब तक ये जारी रहेगी तब तक हम समानता, विकास और अमन की दिशा में वास्तविक प्रगति करने का दावा नहीं कर सकते।"*

मानव अधिकार के सिद्धांतों की उत्पत्ति व्यैक्तिक स्वतंत्रता के अधिकार से हुई है। अंतर्राष्ट्रीय मानव अधिकार कानून की रचना इन्हीं व्यक्तिगत अधिकारों की राज्य नियंत्रण से स्वायत्तता बरकरार रखने के लिए की गई है। ये कानून व्यक्तिगत अधिकारों के संरक्षण व हनन दोनों की ज़िम्मेदारी राज्य पर डालते हैं।

मानवाधिकारों के विकास को 'पीढ़ियों' के अनुसार क्रमबद्ध किया गया है- यानी प्रथम पीढ़ी अधिकारों में नागरिक व राजनैतिक अधिकार, द्वितीय पीढ़ी में आर्थिक, सामाजिक व सांस्कृतिक हक़ तथा तृतीय पीढ़ी अधिकारों में जन अधिकार शामिल किए गए हैं।

मानवाधिकार आंदोलन के विकास में यह स्पष्ट रूप से परिभाषित है कि 'सभी इंसानों को समान अधिकार मिलने चाहिए।' अंतर्राष्ट्रीय कानून में सैद्धांतिक रूप से स्त्री व पुरुष के बीच अधिकारों को लेकर कोई लैंगिक भेदभाव नहीं किया गया है। परन्तु व्यवहार में पुरुषों को 'सार्वजनिक' व स्त्रियों को 'व्यक्तिगत' दायरों में विभाजित रखा गया है। अर्थात पुरुषों का अस्तित्व 'सार्वजनिक' व कानूनी है और उन्हें नागरिक व राजनैतिक अधिकार मुहैय्या हैं। स्त्रियां 'निजी' या घरेलू सीमाओं में रखी गई हैं और इस लिहाज़ से वे राज्य दायित्व व मानवाधिकार विमर्श को परिभाषित करने की परिधि से बाहर हैं। महिलाओं के इस 'घरेलूपन' को सामाजिक व सांस्कृतिक आधार पर जायज़ ठहराया जाता रहा है। इसके कारण अंतर्राष्ट्रीय कानून, महिलाओं के साथ सार्वजनिक क्षेत्र में किए जाने वाले मानवाधिकार हनन को बरकरार रखने व दोहराने में सहयोगी भूमिका अदा करता है।

अंतर्राष्ट्रीय कानून में निजी/सार्वजनिक का यह भेद घरेलू हिंसा के मामलों में मुखर रूप से नज़र आता है; कानून सिद्धांत में जेंडर-तटस्थ होने के बावजूद व्यवहार में जेंडर पूर्वग्रहों से ग्रस्त रहता है। परिवार के भीतर महिलाओं द्वारा झेले उत्पीड़न भी अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार कानून के ढांचे से बाहर रखे गए हैं। नारीवादियों के अनुसार घरेलू हिंसा 'यातना' है। घर में महिलाओं के साथ अमानवीय व अपमानजनक बर्ताव व सार्वजनिक क्षेत्र में क्रूरता के बीच व्यावहारिक समानताएं हैं। इसलिए यातना चाहे सार्वजनिक क्षेत्र में हो चाहे निजी क्षेत्र में, दोनों में हिंसा की तीव्रता कम नहीं होती और राज्य को दोनों में समान निर्णय के मानक व कार्यप्रणाली अपनानी चाहिए।

मौजूदा अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार कानूनों में स्त्री-पुरुष समानता पर ज़ोर दिया गया है। पर यह महिलाओं के दोयम दर्जे के सवाल को सम्बोधित करने के लिए काफी नहीं है। हाल ही में गैर सरकारी संगठनों ने महिला उत्पीड़न व घरेलू हिंसा को पारम्परिक मानवाधिकार कानूनों के तहत जांचने पर विशेष ध्यान देना शुरू किया है। ये सभी प्रयास उसी ढांचे को सम्बोधित करते हैं जो 'महिलाओं की खामोशी' की नींव पर टिका है। पर मूल समस्या औरतों के साथ भेदभाव की नहीं बल्कि घरेलू, सार्वजनिक व अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार कानून में उनकी सत्ताहीनता और कमतर दर्जे की है। घरेलू हिंसा व उत्पीड़न को मानवाधिकार हनन के मुद्दे के रूप में देखने के साथ-साथ इसे मानवाधिकार विमर्श को परिभाषित करने में महिलाओं की सत्ताहीनता और कमतरी की सच्चाई के साथ जोड़कर भी देखा जाना महत्वपूर्ण है। तभी व्यापक बदलाव की उम्मीद की जा सकती है।

विभूति पटेल

घरेलू हिंसाः महिलाओं के मानव अधिकारों का हनन

विभूति पटेल

सन् 2009 के एक सर्वेक्षण से पता चला कि 42% महिलाएं अपने जीवनकाल में कम से कम एक बार शारीरिक या मनोवैज्ञानिक हिंसा झेलती हैं।

आई सी आर डब्ल्यू 2004

वयैक्तिक जीवन में होने वाली हिंसा में गर्भ-पूर्व लिंग जांच, बालिका शिशु हत्या, दहेज हत्या, जबरन बहुविवाह, पारिवारिक व्यभिचार, लड़कियों की खरीद-फरोख्त, गंभीर सामाजिक समस्याओं की श्रेणी में आती हैं।

माथुर 2004

भारतीय नारीवादियों के अनुसार पितृसत्ता के स्तंभ-परिवार, बंधुत्व व सामुदायिक संगठन, धार्मिक व सांस्कृतिक संस्थाएं व राज्य, जान-बूझकर, विधवा, तलाकशुदा व परित्यागता महिलाओं के दहन व उत्पीड़न को प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से महिमा मंडित करते हैं। यह सभी हिंसाएं महिला की यौनिकता, उर्वरता, श्रम, सम्पत्ति व भूमि अधिकार पर नियंत्रण करने के साधन हैं। (लोहिया 1998)

परिचय

सीडब्ल्यूडीएस संस्थान द्वारा किए गए शोध के अनुसार हर घंटे, पांच महिलाएं घरेलू हिंसा का सामना करती हैं। अन्य अध्ययनों के अनुसार हर छः घंटे पर भारत में एक विवाहित महिला ज़िंदा जला दी जाती है या मारपीट के कारण मृत्यु या आत्महत्या का शिकार होती है। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण-2, के अनुसार भारत की हर पांचवी, विवाहित महिला पंद्रह वर्ष की उम्र से घरेलू हिंसा का शिकार होती है। 56% महिलाएं पति द्वारा मारपीट को वैध ठहराती हैं। 75% महिलाएं परिवार की इज़्ज़त की खातिर घरेलू हिंसा चुपचाप झेलती हैं।

घरेलू हिंसा में इन व्यवहारों को शामिल किया जा सकता है:

- नकारात्मक आलोचना व मौखिक हिंसा-चीखना, मज़ाक उड़ाना, इल्ज़ाम, गाली-गलौज व मौखिक धमकी।
- दबाव के तरीके- आर्थिक नियंत्रण, बात न करना, कार, फोन, बच्चे छीन लेना, दोस्तों, रिश्तेदारों से आपके बारे में झूठ बोलना, निर्णय न लेने देना, बात मानने को मजबूर करना।
- बेइज़्ज़ती-दूसरों के सामने नीचा दिखाना, बात पर ध्यान न देना, फोन काट देना, पैसा छीन लेना, घर के काम व बच्चों की देखभाल में मदद न करना।
- विश्वास तोड़ना-झूठ बोलना, जानकारी छिपाना, आवाजाही नियंत्रण, साझे वादे न निभाना।
- अकेला कर देना-फोन-दोस्त से मिलने, बाहर आने-जाने की मनाही।
- उत्पीड़न-पीछा करना, चिट्ठी पढ़ना, फोन सुनना, सार्वजनिक रूप से बेइज़्ज़त करना।

- धमकी-गुस्से, शारीरिक बल, चीखने, द्वारा डराना, चीज़ों को तोड़ना, बंदूक, चाकू दिखाकर आपको/बच्चों को मारने की धमकी।
- यौन हिंसा-जबरन समागम, यौन हिंसक व्यवहार।
- शारीरिक हिंसा-मारपीट, काटना, लातें-घूसें मारना, बाल खींचना, धक्का-मुक्की, गला घोंटना, जलाना।
- मनाही-रोना-धोना और माफी मांगना, हिंसा दोबारा न करने या हिंसा उकसाने का आरोप, दूसरों के सामने नर्मी से पेश आना।

घरेलू हिंसा कानून 2005 के अनुसार घरेलू हिंसा की परिभाषा में निम्न व्यवहार शामिल हैं

- स्वास्थ्य, सुरक्षा, जीवन, शरीर व कुशलता को नुक्सान या चोट पहुंचाना, शारीरिक, मानसिक शोषण, यौन मौखिक, भावनात्मक, आर्थिक हिंसा।
- आपको या आपके जानकारों को कोई भी गैर कानूनी मांग दहेज, सम्पत्ति या कीमती वस्तु देने के लिए उत्पीड़न, चोट, नुक्सान, धमकी वाला व्यवहार।
- आपको व आपके रिश्तेदारों को तकलीफ पहुंचाने वाले उपर्युक्त व्यवहार या शारीरिक-मानसिक हिंसा व चोट पहुंचाने वाले व्यवहार।

घरेलू हिंसा मामलों में राज्यों के आंकड़े निम्न हैं-

बिहार	59% ग्रामीण / 63% शहरी
राजस्थान	46.3%
मध्यप्रदेश	45.8%
मणिपुर	43.9%
उत्तरप्रदेश	42.4%
तमिलनाडु	41.9%
पश्चिमी बंगाल	40.3%
हिमाचल प्रदेश	6%

धर्म के अनुपात में निम्न महिलाएं घरेलू हिंसा सहती हैं

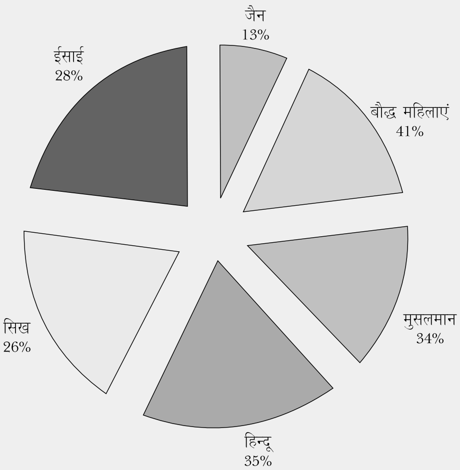

भारत में घरेलू हिंसा

राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण-III के आंकड़ों के अनुसार:

- 55% भारतीय महिलाएं व लगभग 50% पुरुष पत्नियों के साथ मारपीट को सही मानते हैं।
- 40% महिलाओं ने अपने विवाहित जीवनकाल में घरेलू हिंसा का सहा है।
- अट्ठाइस राज्यों की सवा लाख महिलाओं में से एक तिहाई ने स्वीकारा कि कम से कम एक बार उन्होंने पति के धक्का, झिझोड़ना, शारीरिक हिंसा व थप्पड़ मारे जाने वाले व्यवहार सहे हैं।
- 34% महिलाओं को थप्पड़ मारा गया है, 15% के बाल खींचे या बांह मरोड़ी गई, 14% के ऊपर चीज़ें फेंकी गई हैं।
- 62% ने शादी के दो वर्षों के भीतर शारीरिक-यौनिक हिंसा झेली है।

- 10% महिलाओं ने वैवाहिक बलात्कार की बात की।
- केवल 20% महिलाओं ने घरेलू हिंसा में पुलिस की मदद ली।
- 75000 पुरुषों में से 51% ने पत्नियों के साथ मारपीट को सही ठहराया।

विडम्बना यह है कि अधिकांश महिलाएं घरेलू हिंसा को सही ठहराती हैं तथा पुरुषों को यह सीख दी जाती है कि हुकुम-अदूली करने पर हिंसा की जा सकती है। इस सामाजिक सोच के कारण घरेलू हिंसा को अपराध की तरह नहीं देखा जाता।

भारतीय संविधान ने महिलाओं को घरेलू हिंसा को चुनौती देने के लिए निम्न मूलभूत अधिकार प्रदान किए हैं:

अनुच्छेद 14 - राजनैतिक, आर्थिक व सामाजिक स्तर पर पुरुषों व महिलाओं को समान अधिकार व अवसर

अनुच्छेद 15 - लैंगिक, धार्मिक, जाति आधारित भेदभाव पर प्रतिबंध

अनुच्छेद 15 (ई) महिलाओं के लिए सकारात्मक कदम उठाने का राज्य दायित्व

अनुच्छेद 15 - सार्वजनिक नियुक्तियों में समान अवसर

महिलाओं की सुरक्षा व घरेलू हिंसा कानून की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

1983 में घरेलू हिंसा का अपराध माना गया और भारतीय दंड संहिता के अनुच्छेद 498ए में इसका उल्लेख किया गया। इस कानून के तहत पति व परिवार की ओर से विवाहित महिला के साथ क्रूरतापूर्ण व्यवहार घरेलू हिंसा के दायरे में माना गया। इनमें महिला को आत्महत्या के लिए मजबूर करना, जीवन, शरीर, स्वास्थ्य को चोट पहुंचाने वाले व्यवहार, सम्पत्ति, धन के लालच में उत्पीड़न तथा धन या जायदाद न देने की सूरत में की गई हिंसा को 'क्रूरता', मानते हुए घरेलू हिंसा को अपराध स्वीकारा गया।

'क्रूरता' की परिभाषा में खाना न देना, यौन हिंसा, घर से बाहर निकालना, मानसिक प्रताड़ना, शारीरिक, मौखिक उत्पीड़न, तलाक की धमकी, बच्चों से न मिलने देना, सामाजिक आवाजाही पर रोक व गाली गलौज शामिल किए गए। इस कानून में महिला को **'विवाहित घर'** में अपने पति व बच्चों के साथ रहने का हक़ दिया गया। अगर महिला को घर से बाहर निकलने पर मजबूर किया जा रहा हो तो वह अदालत से सुरक्षा आदेश हासिल कर सकती थी।

अनुच्छेद 498ए-दहेज के लिए उत्पीड़न को भी घरेलू हिंसा के रूप में अपराध मानता है। अगर विवाह के सात वर्षों के अन्दर महिला की 'अप्राकृतिक मृत्यु' हो जाती है तो उसे दहेज-हत्या माना जाएगा और उसके लिए सात वर्ष कैद की सज़ा दी जा सकती है। दहेज उत्पीड़न के कारण आत्महत्या के लिए धारा 306 व दहेज हिंसा से मृत्यु के लिए धारा 304ब के तहत कार्यवाई की जा सकती है। इन हालातों में पति व ससुराल वालों को अपनी बेगुनाही साबित करनी होगी।

घरेलू हिंसा का एक महत्वपूर्ण हिस्सा **वैवाहिक बलात्कार** भी है। परन्तु भारत में वैवाहिक बलात्कार अपराध नहीं माना जाता। पर अप्राकृतिक यौन संबंधों या नाजायज़ यौन मांगों को 'क्रूरता' मानते हुए तलाक का आधार माना जा सकता है। यद्यपि कानूनी रूप से अलग रह रही महिला के साथ उसका पति जबरन समागम नहीं कर सकता और इसके विरुद्ध धारा 376ए के तहत कार्यवाई की जा सकती है।

घरेलू हिंसा रोकने के लिए महिला क्या कर सकती है?

एक तरीका तो यह है कि मजिस्ट्रेट से महिला 'अच्छे व्यवहार का अनुबंध' जारी करवाने का प्रयास करे जिससे पति को हिंसा बंद करने का आदेश दिया जाएगा। पति को रुपए या जायदाद के रूप में एक-मुश्त गारंटी भी जमा करनी होगी जो आदेश का उल्लंघन करने पर जब्त की

जा सकती है। *घरेलू हिंसा कानून 2005* के तहत महिला के पास रिहाइशी अधिकार सुरक्षित हैं जिनके आदेशार्थ मजिस्ट्रेट या सुरक्षा अधिकारी मदद करेंगे।

घरेलू हिंसा के मामले में महिलाएं नागरिक व फौजदारी, दोनों कानूनों की मदद ले सकती हैं।

घरेलू हिंसा कानूनों का क्रियान्वयन

महिलाओं को सुरक्षा प्रदान करने के लिए राज्यों को कानूनों के क्रियान्वयन पर विशेष ध्यान देना होगा। इस दिशा में निम्न महत्वपूर्ण कदम उठाए जाने चाहिए:

- राज्य व केन्द्र स्तर पर वैधानिक अधिकारियों की नियुक्ति
- कानूनों के क्रियान्वयन के लिए नीतियां व दिशानिर्देश
- महिला संबंधी आंकड़ों का एकत्रण व नवीनीकरण
- समय-समय पर कानूनों की उपयोगिता की समीक्षा
- वैधानिक अधिकारियों जैसे प्रशासक, पुलिस, स्वास्थ्यकर्मी परामर्शदाताओं का प्रशिक्षण व कौशल विकास
- कम खर्चीली, सीधी-साधी व अल्पकालीन कानूनी प्रक्रियाओं का परिचय

दिलासा क्राईसिस सेंटर

स्वास्थ्य प्रणाली को घरेलू हिंसा व महिलाओं के प्रति संवेदनशील बनाने के लिए मुंबई की एक स्वयंसेवी संस्था, *सेहत व बृहन् मुंबई नगरपालिका* के सार्वजनिक स्वास्थ्य विभाग ने *के.बी. भामा अस्पताल* में 'दिलासा' की शुरूआत की है। 'दिलासा' का मानना है कि एक सुरक्षित घर व जीवन हर महिला का मूल अधिकार है तथा घरेलू हिंसा के लिए कोई भी कारण उचित नहीं हो सकता। इस कार्यक्रम का लक्ष्य है घरेलू हिंसा से पीड़ित महिलाओं को सामाजिक-मनोवैज्ञानिक सहयोग, परामर्श, अस्थाई आश्रय व कानूनी मदद प्रदान करना। साथ ही स्वास्थ्यकर्मियों को संवेदनशील व स्नेहपूर्ण व्यवहार व सलाह का प्रशिक्षण देना। 'दिलासा' कार्यक्रम से जुड़ने वाली महिलाओं की मदद के लिए अन्य संगठनों, कानूनी संस्थाओं, पुलिस व सहयोगियों के साथ भी सम्पर्क रखा जाता है।

- सरकारी व गैर-सरकारी स्रोतों द्वारा महिलाओं के लिए उपलब्ध सहयोग सेवाओं की जानकारी बढ़ाना
- सभी वैधानिक, कानूनी, नीति निर्धारण, नियुक्तियों में महिलाओं की भागीदारी
- बहु-संस्था व अंतर-संगठन कार्यप्रणालियों को प्रोत्साहन
- वैधानिक-कानून संगठनों के सुचारु कार्य के लिए उपयुक्त बजट का आबंटन
- केंद्रीय अधिकारी द्वारा आय-खर्चों की नियमित निगरानी व संसद में प्रस्तुति

सारांश

बच्चों, महिलाओं व बुजुर्ग स्त्रियों को घरेलू हिंसा से सुरक्षित रखने व उनके मानव अधिकारों को स्थापित करने के लिए सकारात्मक प्रयासों की आवश्यकता है। इन प्रयासों द्वारा निम्न ज़रूरतों को संबोधित किया जाना दीर्घकालीन सुरक्षा के लिए ज़रूरी है।

- महिलाओं की आर्थिक सुरक्षा, जायदाद, रुपए-पैसे संबंधी साधनों तक पहुंच व नियंत्रण को बढ़ाना।
- प्रशिक्षण व संवेदनशीलता कार्यक्रमों का विकास जिससे स्वास्थ्यकर्मी, न्यायपालिका, परामर्शदाता, पुलिस व अन्य सहयोगी सेवा प्रदान करने वाले अपना दायित्व समझें।
- सरकारी अस्पतालों में घरेलू हिंसा से निपटने के लिए विशेष प्रबन्ध।
- घरेलू हिंसा के प्रति सार्वजनिक चेतना व दायित्व बढ़ाने के लिए रेडियो, अखबार, पत्रिका, टेलिविज़न व अन्य मीडिया साधनों का उपयोग।
- हिंसा करने वाले पुरुषों के लिए विशेष सुधार व सहयोगी कार्यक्रमों का विकास।
- शिक्षा के माध्यम से घरेलू हिंसा रोकने पर ज़ोर।

घरेलू हिंसा की रोकथाम के लिए समाज के मानकों व मूल्यों में परिवर्तन होना ज़रूरी है। जब तक संघर्ष के निपटारे के लिए हिंसा का रास्ता अपनाया जाता रहेगा समाज में बदलाव नहीं आ सकता। महिलाओं के प्रति भेदभाव व पारम्परिक नज़रियों में परिवर्तन आने पर ही घरेलू हिंसा को जड़ से मिटाया जा सकता है।

एक काली लड़की का हलफ़नामा

अमित कुमार

तुमने मुझे कभी
मुड़कर दोबारा
नहीं देखा
हालांकि तुम
घूरते हो हर लड़की को
बार-बार
हे कृष्णा!
तुम मेरे सामने आते ही
भीष्म पितामह
क्यों हो जाते हो?

तुमने कभी नहीं की
मेरी तारीफ
जबकि दूसरी लड़कियों की शान में
गढ़े न जाने कितने कसीदे
वे गाती हैं तो
पायलों की मधुर झंकार
और मैं गाती हूं तो
सदी का पूरा दर्द!

अब तुम्हीं बताओगे
या मैं बता दूं
ये फ़र्क़ क्यों है?

खैर! तुम क्या बताओगे
तुमने तो यह भी नहीं बताया कि
जब पढ़ाती होती हूं
क्लास में

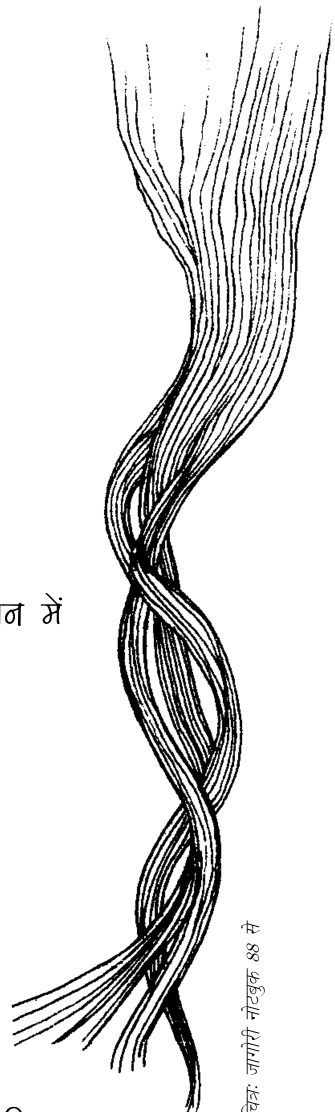
चित्रः जागोरी नोटबुक 88 से

तो बच्चों की आंखें
विश्वास से कितनी
भर जाती हैं।

पिता के हाथों में जब
रखती हूं अपनी तनख़्वाह
तो वे अब भी
फूले नहीं समाते हैं
मां मुझे अक्सर
बेटा कहकर दुलारती है।
(हालांकि यह मुझे अजीब लगता है)

मैं भी कर सकती हूं बात
फैशन, बिग बॉस, बे-वॉच और
बाईक्स की
मेरे ठेंगे से गर कोई
सोचे मुझे बुरा
पर ताड़ सकती हूं
मैं भी
हैंडसम छोकरों को।

तुम्हें ये सारी चीज़ें
नहीं दिखतीं क्योंकि
मेरी चमड़ी के रंग का
कालापन कब का
तुम्हारी आंखों में
उतर आया है।

साभारः हंस, फरवरी 2009

अदृश्य दुश्मन से संघर्ष कैसे करें?

उर्वशी बुटालिया

संतोष एक प्रशिक्षित और काबिल वकील है। कानून की पढ़ाई खत्म करने के बाद उसने कई सालों तक एक अच्छी कम्पनी में नौकरी की। शादी होने पर उसे ये नौकरी छोड़नी पड़ी। शादी के कुछ अर्से बाद उसने एक महिला संगठन में बतौर वकील पार्ट टाईम काम करना दोबारा शुरू कर दिया। इस दौरान उसकी शादी लगभग समाप्ति की कगार पर पहुंच चुकी थी। उसके पति को किसी और से मुहब्बत हो गई थी और वह संतोष से तलाक चाहता था। पर संतोष अपनी शादी बचाना चाहती थी क्योंकि उसके लिए यही जीने का आधार था। परन्तु पति के दबाव में आकर उसे तलाक के लिए राज़ी होना ही पड़ा।

इस पूरे अनुभव में हालांकि पति उसे छोड़ना चाहता था, परन्तु संतोष खुद को दोषी मान रही थी। उसने एक महिला संगठन से परामर्श भी लिया पर तमाम कोशिशों के बावजूद मन से ग्लानि और अपराध भाव को वह निकाल नहीं सकी। जब मैंने उससे इस किस्से के बारे में पूछा तो उसने बताया कि अपने विवाहित जीवन के वर्षों में उसके पति ने हमेशा उसे नीचा दिखाने का प्रयास किया था। वह उसके साथ गाली-गलौज करता था, बार-बार कहता कि वह कुछ करने के काबिल नहीं है, उसकी शिक्षा का मज़ाक उड़ाता व उसे दिन-रात कमतर होने का एहसास कराता रहता था। इस प्रताड़ना में उसका पूरा परिवार भी शामिल था। और जैसा कि अक्सर देखा गया है सभी मानते थे कि वह संतोष के विषय में जो भी कहता है वह सौ फीसदी सच है। और तो और रोज़ की इस बक-झक से संतोष भी मानने लगी थी कि जो पति कहता है वह सही है।

मीनल का किस्सा कुछ अलग सा है। मीनल के माता-पिता ने उसका विवाह एक ऐसे आदमी से कर दिया जो दरअसल शादी करना ही नहीं चाहता था और जिसे कुछ मानसिक तकलीफ़ भी थी। मजबूरीवश ब्याह की सज़ा उसने अपनी पत्नी को देने की ठान ली। वह घर पर बैठा रहता था और कोई काम नहीं करता था। बात-बात पर मीनल पर दूसरे पुरुषों के साथ संबंध रखने का इल्ज़ाम लगाता। जब मीनल ने घर का खर्चा चलाने के लिए एक महिला स्वयं सेवी संस्था में नौकरी कर ली तो भी वह उसके आने-जाने के समय का हिसाब रखने लगा। अगर वह जल्दी घर लौटे तो कहता, क्या हुआ? आज और ग्राहक नहीं मिले क्या? अन्य दिन वह चीखता कि सारा दिन कहां रहीं। समय-समय पर वह ज़ोर-ज़ोर से उस पर चिल्लाता और गालियां देता जिससे आस-पास के पड़ोसी सुन सकें। नतीजा मीनल एक खौफज़दा जीवन जीती है। उसे शारीरिक हिंसा का डर नहीं है। डर है कि लोग उसके बारे में क्या सोचेंगे। हाल ही में उसके दफ़्तर का चपरासी उसे सड़क पर मिल गया पर मीनल ने उसकी नमस्ते तक का जबाब नहीं दिया। उसे डर था कि अगर लोगों ने उसे सड़क पर किसी

मर्द से बात करते देख लिया तो वे उसके पति द्वारा लगाए इल्ज़ामों को सच समझ लेगें।

मौखिक हिंसा- गाली-गलौज व अपशब्द का इस्तेमाल, बेइज़्ज़ती और नीचा दिखाने के लिए उपयोग किए गये जुमले या नाक़ाबिल होने का एहसास कराना शारीरिक हिंसा से अधिक गहरे जख़्म छोड़ता है। इसमें हिंसा का सबूत देने वाले कोई प्रत्यक्ष प्रमाण शरीर पर दिखाई नहीं देते या सहयोग हासिल करने के लिए कोई चोट या घाव नहीं छोड़ते। मौखिक हिंसा को पहचानना भी सबसे अधिक मुश्किल होता है क्योंकि अक्सर इसे मज़ाक, तानों या उपहास के अंदाज़ में इस्तेमाल किया जाता है। पर ये अंदाज़ भी इससे पहुंचने वाली चोट, पीड़ा और त्रास को कम नहीं करते।

इसलिए घरेलू हिंसा कानून इतना महत्वपूर्ण है। इसके दायरे में न सिर्फ़ घर के बाहर मौजूद महिलाएं भी शामिल की गई हैं (जैसे अतिथि या घरेलू कामगार) बल्कि इसमें मौखिक हिंसा को भी हिंसा के रूप में स्वीकारा गया है।

यह ज़रूर है कि इस प्रावधान को अदालत में साबित करने के लिए बहस व जिरह खूब करनी पड़ेगी पर किसी भी सूरत में इस हिंसा को महत्वहीन करार नहीं दिया जा सकता। दो इंसान एक ही छत के नीचे सौहार्दपूर्ण रहने का दिखावा कर सकते हैं और चाहे उनके बीच शारीरिक हिंसा न हो पर दोनों एक दूसरे को ताने मारकर व अपशब्द कहकर हिंसा की सभी सीमाएं लांघ सकते हैं। रिश्तों में कौन सी बात किस अंदाज़ व तरीके से कही गई है इसका बहुत फ़र्क़ पड़ता है।

स्त्री-पुरुष अंतर्सबंधों में ऐसे बहुत से छोटे-छोटे, प्रखर व कपटी तरीके पुरुष अपनाते हैं जिनसे औरतों को नीचा दिखाकर अपमानित किया जा सके। इन आत्मविश्वास को तोड़ने में सक्षम प्रयासों का प्रभाव शारीरिक हिंसा से कहीं अधिक ज़ोर से पड़ता है। एक टूटी हुई हड्डी को जोड़ना आसान होता है परन्तु चोट खाए स्वाभिमान, या मानसिक आघात की दवा करना बहुत मुश्किल है। अगर आसपास देखें तो ऐसी बहुत सी कुशाग्रबुद्धि, हुनरमंद, सक्षम महिलाएं हमारे इर्द-गिर्द मिल जाएंगी जिन्होंने अपने विवाहित रिश्तों या संबंधों में चुभते, तीक्ष्ण शब्दों के बाण झेले हैं और

जिसके कारण उसका आत्मविश्वास पूर्ण रूप से तहस-नहस हो चुका है। बार-बार दोहराया जाने वाला झूठ भी अक्सर सच प्रतीत होता है और अगर इस पर स्वभाविकता का मुखौटा और चढ़ा दिया जाए तो आप स्वयं भी इस पर विश्वास करने लगेगीं।

इसके अतिरिक्त शारीरिक हिंसा जहां घर की चारदीवारी के बीच 'छिपी' रहती है वहीं मौखिक हिंसा की कोई सीमा या सरहद नहीं होती। मौखिक बातें घर की चक्की में पिसने वाली औरत के लिए चावल में घुन के समान होती हैं जो उसके समूचे अस्तित्व को अंदर ही अंदर खोखला कर देती हैं।

अब इस बात को साफ़ तौर पर मान लिया गया है कि तमाम कानूनों के मौजूद होने के बावजूद भी महिलाओं को समान दर्जा न मिल पाने के पीछे कानूनों के क्रियान्वयन से अधिक ठोस कारण है अपरिवर्तनशील सामाजिक रवैया। एक ऐसी मानसिक सोच जो महिला को *समान* मानने से इंकार करती है। ये वही सोच है जो परिवारों और घरों के दरीचों के बीच पनपती है, जिसकी सुगबुगाहट भी सुनाई नहीं पड़ती और जो मौखिक हिंसा के भयावह दुष्परिणामों को हर कदम दरकिनार करती रहती है।

बच्चों के साथ यौन हिंसा भी घरेलू हिंसा है

अनुजा गुप्ता

यह लेख आपको बाल यौन हिंसा को समझने तथा इससे निपटने में सहयोग करेगा। इससे आपको ऐसी जानकारी मिलेगी जिस पर अमल करके आप अपने बच्चों को यौन हिंसा से सुरक्षा प्रदान कर सकेंगी तथा घर में ऐसा माहौल पैदा कर सकेंगी जिससे यौन हिंसा के मामले खुलकर सामने आएं। याद रखिए बाल यौन हिंसा घरेलू हिंसा का ही एक रूप है जिसे सार्वजनिक बनाना हम सबकी ज़िम्मेदारी है। हर बच्चे को यौन हिंसा मुक्त माहौल प्रदान करना हर व्यस्क का दायित्व है।

बच्चों के साथ यौन हिंसा एक ऐसा घिनौना व डरावना सच है जिसे अधिकांश माता-पिता संबोधित करने से कतराते हैं। हम यह भावनाएं समझ सकते हैं पर इसे नज़रअंदाज़ करने की कीमत हमें अपने बच्चे की सुरक्षा से चुकानी पड़ सकती है। बच्चों को एक महफूज़ यौन सुरक्षित माहौल प्रदान करना हमारी ज़िम्मेदारी है। इसलिए इससे जुड़े खतरों को समझकर, तैयार रहना ही बेहतर होगा।

अपने बच्चों को यौन हिंसा से सुरक्षित रखने के लिए इससे पहचानना तथा इससे जुड़े मिथकों व पूर्वग्रहों को भी समझना बेहद महत्वपूर्ण है।

बाल यौन हिंसा क्या है?

जब किसी बच्चे को बलपूर्वक, बहला-फुसलाकर या दबाव से कोई व्यस्क या उससे उम्र में बड़ा व्यक्ति यौन

क्रियाओं के लिए बाध्य करता है तो यह यौन हिंसा कहलाती है। ज़बर्दस्ती करने वाला व्यक्ति अपनी सत्ता, ताकत तथा बच्चे के विश्वास का फायदा उठाते हैं। बच्चे के ऊपर थोपी गई यौन क्रियाओं में चूमना, यौनिक ढंग से लिपटना, बच्चे के गुप्त अंगों को छूना या उनमें कोई बाहरी वस्तु डालना, बच्चे के सामने कपड़े उतारना, हस्तमैथुन, अश्लील साहित्य या तस्वीरें दिखाना, मुख मैथुन, संभोग आदि शामिल हैं। जब ये यौनिक क्रियाएं घर के भीतर या घर जैसे माहौल में रिश्तेदार या परिवार के सदस्य द्वारा की जाती हैं तब इसे 'इनसेस्ट' या पारिवारिक व्यभिचार कहा जाता है। बाल यौन हिंसा में बच्चे के शरीर तथा सम्मान का हनन होता है तथा इसमें अंतरंग पारिवारिक विश्वास और देखभाल के रिश्तों में दरार पड़ती है। इन क्रियाओं में हिंसा निहित है इसलिए इसे हमउम्र बच्चों के बीच यौनिक खोजबीन और जानकारी पाने की उत्सुकता से अलग रखकर देखा जाना चाहिए।

बाल यौन हिंसा भारत की एक सच्चाई है जो शहरी, सम्पन्न घरों में घटती है। हमारे अपने शोध अध्ययन, जिसमें हमने 15-67 उम्र समूह की 600 अंग्रेज़ी बोलने वाली महिलाओं से बात की थी, से पता चला है कि 76% महिलाओं के साथ अट्ठारह वर्ष की उम्र से पहले यौन हिंसा हुई थी।

यौन हिंसा करने वालों में अधिकांश पुरुष, पारिवारिक सदस्य, दोस्त, रिश्तेदार होते हैं जिन पर परिवार तथा बच्चे का विश्वास होता है। इनमें पिता, चाचा, मामा, दादा, शिक्षक, पड़ोसी, मौसा, फूफा, समुदाय के इज़्ज़तदार लोग आदि हो सकते हैं। ये अलग-अलग पृष्ठभूमि से आते हैं और इनमें हर धर्म, वर्ग, जाति, व्यवसाय व आर्थिक-सामाजिक समूह के लोग हो सकते हैं। महिलाएं भी बाल यौन हिंसा कर सकती हैं हालांकि यह उतनी आम नहीं पाई गई है।

यौन हिंसा करने वाले 'नार्मल' लोग होते हैं जो हमारे परिवारों में रहते हैं। वे बीमार, विकृत मानसिकता वाले या अलग दिखने-सुनने वाले नहीं होते। उनको अलग मानकर हम इस समस्या से निपटने की अपनी क्षमता पर अंकुश लगाते हैं तथा उन्हें बच निकलने का बहाना दे देते हैं। बच्चों के पास सत्ता का अभाव होता है तथा वे बड़ों पर निर्भर होते हैं। उन्हें बड़ों का कहना मानने की सीख दी जाती है और वे बड़ों के व्यवहार का वास्तविक मकसद नहीं समझ पाते इसलिए उनका फायदा उठाना आसान होता है।

इसके अलावा *बच्चों के साथ यौन हिंसा कहीं भी और किसी भी समय की जा सकती है।* यह घर की चारदीवारी के भीतर, या कोई अन्य जानी पहचानी जगह में, दिन-रात कभी भी हो सकती है। हिंसा करने वाला बस एक उपयुक्त मौके की तलाश में रहता है।

बच्चे यौन हिंसा को लेकर अक्सर खामोश रहते हैं। एक तो उनके पास सही शब्द नहीं होते, दूसरा उन्हें लगता है कि जो हो रहा है उसके लिए वे स्वयं ज़िम्मेदार हैं। हिंसा करने वाले उन्हें डरा-धमकाकर या फिर उन्हें और उनके चाहने वालों को नुक्सान पहुंचाने का खौफ़ दिखाते हैं। बच्चे को ऐसा भी लगता है कि कोई उसका विश्वास नहीं करेगा या फिर इसके बारे में किसको बताया जाए। वे शर्मिन्दा भी होते हैं इसलिए उनकी बात को ध्यान से सुनकर उनका विश्वास करना चाहिए।

बच्चे यौन हिंसा के लिए ज़िम्मेदार नहीं ठहराए जा सकते। ध्यान रखिए बच्चे मासूम होते हैं जिन्हें यौन संबंधों व क्रियाओं की पूरी समझ नहीं होती। उसे जानकारी हो तो भी उसे यौन हिंसा में शामिल होने के लिए दोषी या ज़िम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता। यह केवल हिंसा करने वाले की ज़िम्मेदारी है।

अपने बच्चे को यौन हिंसा से बचाने के लिए क्या करें?

- सबसे पहले आप ये स्वीकार करें कि यौन हिंसा आपके परिवार में हो सकती है। ऐसा करके आप उससे बचाव के रास्ते तलाश सकती हैं।
- अपने बच्चे को स्वस्थ्य पारिवारिक माहौल प्रदान करें। यह आवश्यक है कि आपके घर का माहौल खुला तथा विश्वास और दोस्ती भरा हो जहां बच्चे को डांट खाने या सज़ा का डर न हो। ऐसे माहौल में उनका आत्म विश्वास बढ़ेगा और वह हर बात आपके साथ बांट पाएंगे।

- खुद सीखने-जानने का प्रयास करें, याद रखें जानकारी ही शक्ति है। इस विषय पर जानकारी होने से आप डर, अविश्वास और घबराहट से दूर रहकर, हिम्मत से उचित समाधान तलाश कर सकती हैं।
- बच्चे को यौन हिंसा के विषय में जानकारी दें। इसे कोई विशेष भाषण या शिक्षा की तरह नहीं बल्कि आम, साधारण जानकारी की तरह अपनी बातचीत में शामिल करें।
- चौकन्नी रहें व अपने बच्चे के मूड, व्यवहार, पसंद-नापसंद पर गौर करें। अगर कोई ऐसा व्यक्ति है जिसे बच्चा पसंद नहीं करता या जिससे वह डरता-घबराता हो तो चौकस रहें और अपनी छठी इंद्रीय पर विश्वास करें।
- अपने साथ बचपन में हुई यौन हिंसा को समझें और इस पर बात करें। हो सकता है आप अपने गुज़रे अनुभव की वजह से सबको अविश्वास व शक़ की नज़र से देखतीं हों। पर यह सही नहीं है। अपने गुज़रे हुए वक्त को समझें और इस प्रकार खुद को इस मुद्दे से निपटने के लिए तैयार करें। सहयोग समूह, बच्चों के स्कूल आदि में इस विषय को लेकर बातचीत करें। इसमें शामिल होकर आप अनेक लोगों की मदद कर सकती हैं।

बाल यौन हिंसा के कुछ मौन संकेत

अगर इनमें से कोई मौन संकेत आपकी नज़र में आएं तो ये बाल यौन हिंसा के सूचक हो सकते हैं।

- अपनी उम्र से ज़्यादा यौनिक जानकारी।
- यौन संबंधी/यौन हिंसा पर कहानियां लिखना।
- यौन संक्रमण या किसी बड़े बच्चे को गर्भ ठहरना।
- यौन क्रियाओं/हिंसा की तस्वीरें बनाना जिसमें यौन अंग बड़े हों और गहरे 'उत्तेजक' रंग जैसे लाल, काला, जामुनी प्रयोग किए गए हों।
- दूसरे बच्चों के साथ अनुचित यौन व्यवहार।
- गुड़िया या खिलौनों का मुख मैथुन या संभोग क्रिया दर्शाने के लिए उपयोग।

अपने बच्चे को यौन हिंसा से बचाव के लिए निम्न जानकारी दें

- शरीर के गुप्त अंगों के नाम की जानकारी दें।
- बच्चे को अच्छी तरह छूना तथा गंदी तरह छूने में फ़र्क़ समझाएं।
- बच्चों को बताएं कि अच्छा, बुरा एहसास क्या है। अगर कोई व्यवहार या बात उन्हें अच्छी नहीं लगती तो वह गलत है।
- बच्चों को बताएं कि अगर कोई उनके गुप्त अंगों को छूता है तो वह सही नहीं है। अगर कोई बड़ा उन्हें अपने यौन अंगों को छूने के लिए मजबूर करता है तो यह भी सही नहीं है।
- परिवार के सदस्यों, रिश्तेदारों के लिए 'छूने' के नियम तय करें।
- परिवार में गोपनीयता और व्यक्तिगत जगह/कमरे में आने-जाने के लिए नियम बनाएं।

- बच्चों को समझाएं कि अगर किसी बड़े की कोई हरकत या व्यवहार उन्हें गलत या अच्छा नहीं लगता तो वह आपको बताएं। इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता कि व्यवहार करने वाला कौन है व बच्चा उसे कितना प्यार करता है।
- बच्चों को 'न' कहना सिखाएं। वे बड़ों को उन बातों व व्यवहार के लिए न कह सकते हैं जो उन्हें पसंद न हों।
- उसे समझाएं कि कोई बात जो उसे परेशान करे उसे 'सीक्रेट' रखना ज़रूरी नहीं है। ये 'सीक्रेट' किसी को बताने से कोई नुक्सान नहीं होगा।

बच्चे के साथ यौन हिंसा होने पर क्या करें?

1. बच्चे का विश्वास करें क्योंकि वे इस तरह की बातें मन से बनाकर नहीं कह सकते। विश्वास करने से आप उसकी मदद करेंगी।
2. उसकी बात ध्यानपूर्वक सुनें और आराम से उससे पूछें कि क्या उसे कोई ऐसे छू रहा है जो उसे पसंद नहीं। कुछ भी जानने की जल्दी व ज़बर्दस्ती ठीक नहीं होती। याद रखें कि वह परेशान और डरी है।
3. अपना संयम बनाए रखें और गुस्सा, झल्लाहट न दिखाएं। अगर आप नर्मी बरतेंगी तो वह सब कुछ विस्तार से बता सकेगी।
4. बच्चे को भरोसा दिलाना बहुत ज़रूरी है जिससे उसे प्यार, सहयोग और विश्वास का एहसास हो। उससे कोई झूठे वादे न करें बल्कि यह आश्वासन दें कि आप सुनिश्चित करेंगी कि ऐसा दोबारा न होने पाए। उसे सुरक्षित न रख पाने के लिए माफी या अफसोस भी जताएं।
5. घर में किसी और सदस्य को विश्वास में लेकर तय करें कि बच्चे की सुरक्षा के लिए क्या इंतज़ाम किए जा सकते हैं। पर अगर आपका साथी ही हिंसक हो तो कुछ परेशानी हो सकती है। पर घर में किसी अन्य से मदद व सलाह ली जा सकती है।
6. कुछ कार्यवाई करें जिससे बच्चा सुरक्षित रहे। हर बार हिंसा करने वाले को सज़ा देना मुमकिन नहीं होता पर बच्चे को उससे दूर रखा जा सकता है। बच्चे को पता होना चाहिए कि आप कौन सी रणनीति लागू कर रही हैं।
7. अपने लिए भी सहयोग तलाशें जिससे आपको ग्लानि, गुस्सा अभिव्यक्त करने की जगह मिले। खुद को अकेला न समझें और दोस्तों परिवार के सदस्यों या व्यवसायिक परामर्शदाताओं की मदद लें।

बाल यौन हिंसा को रोकना संभव हैं। आप याद रखें कि इसमें आपका या बच्चे का कोई दोष नहीं है। दोष सिर्फ़ हिंसा करने वाले व्यक्ति का है। खुद को दोषी मानने या सज़ा देने से कोई हल नहीं निकलेगा। इसलिए हालात को स्वीकारें और समाधान ढूंढे। इस निजी, मूक मुद्दे को खुले में लाने की शिक्षा बच्चे को दें जिससे गोपनीयता और चुप्पी के सहारे पनपने वाली यह हिंसा सामने लाने में मदद मिले।

इस विषय पर अन्य जानकारी के लिए सम्पर्कः
rahifoundation@gmail.com
91+11+26227647

लेख

घरेलू हिंसा व मानसिक स्वास्थ्य

किश्वर अहमद-शिराली

घरेलू हिंसा पर काफी शोध हुआ है जिससे स्पष्ट हो गया है कि इसका प्रभाव महिलाओं के मानसिक, भावनात्मक व शारीरिक स्वास्थ्य पर पड़ता है। आमतौर पर ऐसा समझा जाता है कि हिंसा महिला और पुरुष के बीच खिंची एक सीधी लकीर है। पर सच्चाई यह है कि इन दो पात्रों के साथ-साथ परिवार, पड़ोस और समाज के अन्य पात्र भी इसमें शामिल होते हैं। सामाजिक व्यवस्था के अनेक, उल्टे-सीधे, रंग-बिरंगे, टेढ़े मेढ़े, उलझे हुए धागे हमारे जीवन में अपना प्रभाव डालते हैं।

भारतीय संस्कृति में प्यार-मुहब्बत का इज़हार खुले आम सिर्फ़ सिनेमा के पर्दे पर ही देखने को मिलता है। इसके विपरीत, दैनिक ज़िन्दगी में बच्चे बड़ों को ज़्यादातर लड़ाई-झगड़ा, गुस्सा, घृणा, रोना-धोना, मार पीट करते हुए ही देखते हैं। बड़ों को प्यार का भाव व्यक्त करते हुए देखने का मौका कम ही मिलता है। इस तरह छुटपन से ही उन्हें महसूस होता है कि बड़ों के बीच आपसी द्वेष ही एक स्वभाविक संबंध होता है।

मुझे याद है, मेरी मां का जब मूड खराब होता था, तो बर्तनों को तोड़ना, नौकरों को डांटना, बच्चों की पिटाई और कभी-कभी अनशन कर एकान्त में दिन भर बैठ जाना आम बात थी। शाम को अब्बा कहते- 'अपनी अम्मी को मना कर लाओ।' हमें नहीं पता था कि इस ड्रामे में किसकी क्या भूमिका थी। पर जब अब्बा नहीं रहे (उनके बीच 30 साल का अन्तर था) और बच्चों पर अम्मी को गुस्सा आता था तब भी हम उनको दीवारों पर सर पटकते हुए देखते थे। उस समय यह सब हमारी समझ से बाहर था।

अब कुछ-कुछ समझ में आता है कि किसको कितनी निराशा हुई होगी, किसके आत्म सम्मान को धक्का पहुंचता

होगा, किस के मन में हीनता का भाव जगा होगा और किसको अपनी ज़िन्दगी में लाचारी का आभास हुआ होगा।

इन सभी भावनाओं का नतीजा है- हिंसा। हिंसा दूसरों पर और खुद पर। कभी-कभी जो बुद्धिजीवी होते हैं वे अपनी निराशा, हीन भावना और लाचारी से उत्पन्न होने वाली नाराज़गी, घृणा या गुस्से को पी जाते हैं या फिर दूसरी ओर मोड़ देते हैं जैसे कि किसी अन्य काम में व्यस्त हो जाना या अपना पूरा ध्यान किसी दूसरी ओर केन्द्रित कर लेना। इस बेरुखी के व्यवहार से उनसे जुड़ी महिलाएं विशेषकर पत्नी को मायूसी और कुंठा का एहसास होता है। इससे आग और भड़क उठती है। ये आक्रोश हिंसा के रूप में अभिव्यक्त होता है।

हमारी सामाजिक व्यवस्था भी ऐसी है कि हम अपने मन की बात साफ़-साफ़ नहीं कह पाते। खासकर वे बातें जो हमारे दिल की चाहत से जुड़ी हुई होती हैं। फलस्वरूप हमारे दिल में शर्म, डर, आत्म-दोष की भावनाएं घर कर जाती हैं। मन ही मन कुढ़ते रहने से हिंसा का ज्वालामुखी एक दिन भयानक रूप लेकर फूट पड़ता है। मार-पीट, आक्रोश, उत्तेजना, सामूहिक हिंसा इसी के भयानक चेहरे हैं।

मनोविश्लेषणवादी हिंसा को स्वभाविक समझते हैं, यानी उनके लिए प्यार व घृणा एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। मनोवैज्ञानिक यह भी मानते हैं कि निराशा ही हिंसा की जड़ है। नारीवादी मनोवैज्ञानिकों की सोच निराशा को और गहराई से देखती है। समाज ने महिला को यही सीख दी है कि उसे सुशील, नर्म स्वभाव रखने पर सम्मान और सुख मिलेगा। पर जब ऐसा नहीं होता तो उसे निराशा, दुःख, मानसिक चोट, शर्म और हीनता की भावना को झेलना पड़ता है। इन सब के कारण वह अपनी नज़रों से गिर जाती है व अपने को ही दोषी ठहराने लगती है। वह समझती है कि वह खुद ही अपनी हार के लिये ज़िम्मेदार है। ऐसी स्थिति में मानसिक रोग, मनो-शारीरिक उदासीनता, आत्महत्या, यौनिक विकलांगता से वह अपने आपको दण्डित करने लगती है।

हालांकि ऐसी संवेदनशीलता पुरुषों में भी हो सकती है परन्तु दुनिया भर में उदासीनता का मानसिक रोग महिलाओं में ज़्यादा देखा गया है। इस उदासीनता का मुख्य कारण है महिलाओं में अबला होने की सीख, पुरुषों पर निर्भरता, आत्मकमज़ोरी, असहाय या कुछ न कर पाने का एहसास।

आज के एक मनो-चिकित्सक डॉ. पीटर जानवरों का उदाहरण देकर बतलाते हैं- जंगल में छोटे जानवरों का बड़े जानवर द्वारा शिकार होना आम होता है। ऐसी स्थिति में वे बचाव के लिए क्या करते हैं? उनकी तीन प्रकार की प्रतिक्रिया होती हैं- लड़ना, भागना या बेहोश हो जाना। यह प्रवृत्ति कुछ कुछ मनुष्यों में भी पाई जाती है। गौर करने की बात यह है कि जानवरों में इस आघात से उनके मन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता- उन्हें मानसिक पीड़ा नहीं होती। परन्तु इन्सान को किसी आघात के बहुत देर बाद भी, सालों साल तक मानसिक पीड़ा सताती रहती है। चिकित्सकों ने इसे *पोस्ट ट्रॉमेटिक स्ट्रेस डिसआर्डर* का नाम दिया है। यह एक मानसिक स्थिति है जिसके फलस्वरूप सर या शरीर में दर्द, चिंता, बेहोशी, दुख, नकारात्मक ख्याल, ज़िंदगी से तंग रहना, उत्साह खो देना, खुद को दोषी ठहराना तथा हीनता का भाव होने जैसे लक्षण पाये जाते हैं। यह फ्रीज़ या सुन्न होने की अवस्था है।

संघर्ष के क्षेत्रों में *पोस्ट टॉमेटिक स्ट्रेस डिसआर्डर* की संख्या लगभग 70-80% पाई जाती है। इस स्थिति में महिलाएं और लड़कियां घर की चारदीवारी की घुटन से अनेक मनोशारीरिक तकलीफ़ों में फंस जाती हैं। लड़ाई में गोलाबारी चलती रहने का असर जानवरों पर भी देखा गया है। अफ्रीका के सियारा लिओन देश के एक जंगल में जहां बहुत सालों से आतंक हो रहा था- वहां के एक चिम्पांजी का बच्चा डर के मारे अपने बाल नोच-नोच कर व उंगलियां चबा-चबा कर पागल होकर मर गया।

अन्त में मैं कहना चाहूंगी कि यह समस्या पूरे समाज की है, समाज के स्वास्थ्य की है। नर और नारी, दोनों ही आघात से पीड़ित होते हैं। घरेलू हिंसा में भी कोई प्रत्यक्ष और कोई परोक्ष रूप में पीड़ित होता है। जो सहता है और जो हिंसा करता है, दोनों की मानसिकता को हम जब तक नहीं समझेंगे ये घरेलू हिंसा की गुत्थी कैसे सुलझाई जा सकती है?

अन्नपूर्णा मंडल की आखिरी चिट्ठी

सुधा अरोड़ा

प्यारी मां और बाबा,

चरण-स्पर्श

मुझे मालूम है बाबा, लिफाफे पर मेरी हस्तलिपि देखकर लिफाफे को खोलते हुए तुम्हारे हाथ कांप गये होंगे। तुम बहुत एहतियात के साथ लिफाफा खोलोगे कि भीतर रखा हुआ मेरा खत फट न जाए।

सोचते होंगे कि एक साल बाद आखिर मैं तुम लोगों को खत क्यों लिखने बैठी। कभी तुम अपने डाकघर से, कभी बाबला या बउदी अपने ऑफिस से फोन कर ही लेते हैं फिर खत लिखने की क्या ज़रूरत! नहीं, डरो मत, ऐसा कुछ भी नया घटित नहीं हुआ है। कुछ नया हो भी क्या सकता है।

बस, हुआ इतना कि पिछले एक सप्ताह से मैं अपने को बार-बार तुम लोगों को खत लिखने से रोकती रही। क्यों? बताती हूं। तुम्हें पता है न, बम्बई में बरसात का मौसम शुरू हो गया है। मैं तो मना रही थी कि बरसात जितनी टल सके, टल जाये, लेकिन वह समय से पहले ही आ धमकी। और मुझे जिसका डर था वही हुआ। इस बार बरसात में पार्क की गीली मिट्टी सनी सड़क से उठकर लाल केंचुओं की फौज घर के भीतर तक चली आई है। रसोई में जाओ तो मोरी के कोनों से ये केंचुए मुंह उचका-उचका कर झांकते हैं, नहाने जाओ तो बाल्टी के नीचे कोने पर वे बेखौफ चिपके रहते हैं। कभी-कभी पैरों के नीचे अचानक कुछ पिलपिला-सा महसूस होता है और मैं डर जाती हूं कि कहीं मेरे पांव के नीचे आकर कोई केंचुआ मर तो नहीं गया?

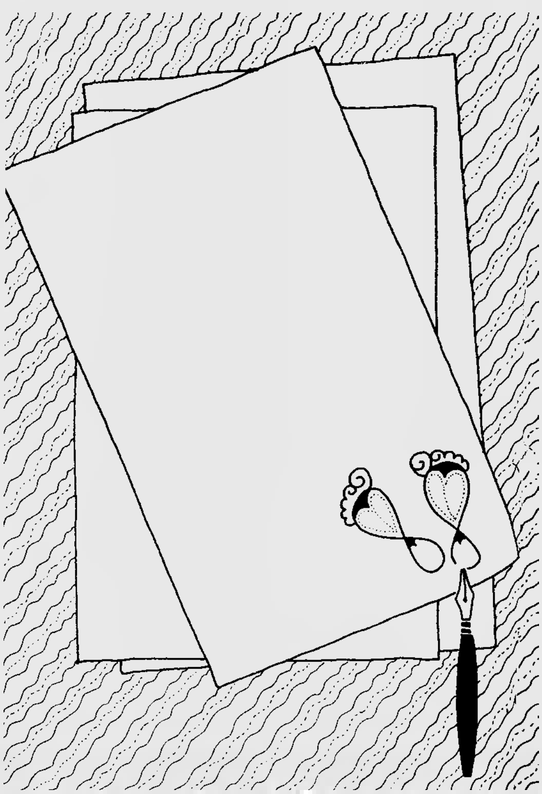

चित्र: बिंदिया थापर

इस बार मुझे बांकुड़ा का वह अपना (देखो, अब भी वही घर अपना लगता है) घर बहुत याद आया। बस, ये यादें ही तुम्हारे साथ बांटना चाहती थी। पता नहीं तुम्हें याद है या नहीं, पता नहीं बाबला को भी याद होगा या नहीं, हम कितनी बेसब्री से बरसात के आने का इन्तज़ार करते थे। मौसम की पहली बरसात देखकर हम कैसे उछलते-कूदते मां को बारिश के आने की खबर देते जैसे पानी की बूंदें सिर्फ़ हमें ही दिखाई देती हैं, और किसी को नहीं। पत्तों पर टप-टप-टप बूंदों की आवाज़ और उसके साथ हवा में गमकती फैलती मिट्टी की महक हमें पागल कर देती थी। हम अख़बार को काट-काट कर कागज की नावें बनाते और उन्हें तालाब में छोड़ते। मां झींकती रहतीं और हम सारा दिन पोखर के पास और आंगन के बाहर, हाथ में नमक की पोटली लिये बरसाती केंचुओं को ढूंढ़ते रहते थे। वे इधर-उधर बिलबिलाते से हमसे छिपते फिरते थे और हम उन्हें ढूंढ़-ढूंढ़ कर मारते थे। नमक डालने पर उनका लाल रंग कैसे बदलता था, केंचुए हिलते थे और

उनका शरीर सिकुड़कर रस्सी हो जाता था। बाबला और मुझमें होड़ लगती थी कि किसने कितने ज़्यादा केंचुओं को मारा। बाबला तो एक-एक केंचुए पर मुट्ठी भर-भर कर नमक डाल देता था।

मां तुम्हें याद है, तुम कितना चिल्लाती थीं बाबला पर... इतना नमक डालने की क्या ज़रूरत है रे खोका। पर फिर हर बार जीतता भी तो बाबला ही था... उसके मारे हुए केंचुओं की संख्या ज़्यादा होती थी। बाबा, तुम डाकघर से लौटते तो पूछते... तुम दोनों हत्यारों ने आज कितनों की हत्या की? फिर मुझे अपने पास बिठाकर प्यार से समझाते... बाबला की नकल क्यों करती है रे! तू तो मां अन्नपूर्णा है, देवीस्वरूपा, तुझे क्या जीव-जन्तुओं की हत्या करना शोभा देता है? भगवान् पाप देगा रे।

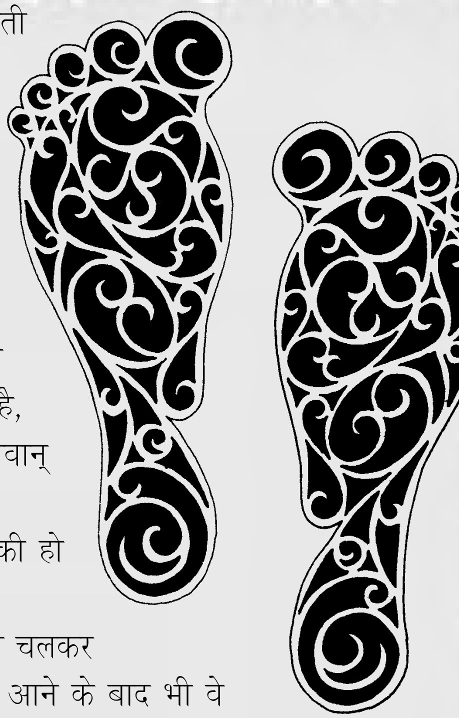

चित्र: बिंदिया थापर

आज मुझे लगता है बाबा, तुम ठीक कहते थे। हत्या चाहे मानुष की हो या जीव-जन्तु की, हत्या तो हत्या है।

तो क्या बाबा, उस पाप की सज़ा यह है कि बांकुड़ा के बांसपुकुर से चलकर इतनी दूर बम्बई के अंधेरी इलाके के महाकाली केव्स रोड के फ्लैट में आने के बाद भी वे सब केंचुए मुझे घेर-घेरकर कर डराते हैं, जिन्हें पुकुर के आस-पास नमक छिड़क-छिड़क कर मैंने मार डाला था।

यह मेरी शादी के बाद की पांचवीं बरसात है। बरसात के ठीक पहले ही तुमने मेरी शादी की थी। जब बांकुड़ा से बम्बई के लिए रवाना हुई, तुम सबकी नम आंखों में कैसे दीए टिमटिमा रहे थे जैसे तुम्हारी बेटी न जाने कौन से परीलोक जा रही है, जहां दिव्य अप्सराएं उसके स्वागत में फूलों के थाल हाथों में लिये खड़ी होंगी। यह परीलोक, जो तुम्हारा देखा हुआ नहीं था पर तुम्हारी बेटी के सुन्दर रूप के चलते उसकी झोली में आ गिरा था, वर्ना क्या अन्नापूर्णा और क्या उसके डाकिये बापू, शिबू मंडल की औकात थी कि उन्हें रेलवे की स्थायी नौकरी वाला सुदर्शन वर मिलता? तुम दोनों तो अपने जमाई राजा को देख-देख कर ऐसे फूले नहीं समाते थे कि मुझे बी.ए. की सालाना परीक्षा में भी बैठने नहीं दिया और दूसरे दर्जे की आरक्षित डोली में बिठाकर विदा कर दिया।

जब मैं अपनी बिछुआ-झांझर संभाले इस परीलोक के द्वार दादर स्टेशन पर उतरी तो लगा जैसे तालाब में तैरना भूल गई हूं। इतने आदमी तो मैंने अपने पूरे गांव में नहीं देखे थे। यहां स्टेशन के पुल की भीड़ के हुजूम के साथ सीढ़ियां उतरते हुए लगा जैसे पेड़ के सूखे पत्तों की तरह हम सब हवा की एक दिशा में झर रहे हैं। देहाती-सी लाल साड़ी में तुम्हारे जीवन भर की जमा-पूंजी के गहने और कपड़ों का बक्सा लिये जब अंधेरी की ट्रेन में इनके साथ बैठी तो साथ बैठे लोग मुझे ऐसे घूर रहे थे जैसे मैं और बाबला कभी-कभार कलकत्ता के चिड़ियाघर में वनमानुष को घूरते थे। और जब महाकाली केव्स रोड के घर का जंग खाया ताला खोला तो जानते हो, सबसे पहले दहलीज़ पर मेरा स्वागत किसने किया था- दहलीज़ की फांकों में सिमटे-सरकते, गरदन उचकाते लाल-लाल केंचुओं ने। उस दिन मैं बहुत खुश थी। मुझे लगा, मेरा बांकुड़ा मेरे आंचल से बंधा-बंधा मेरे साथ-साथ चला आया है। मैं मुस्कुराई थी। पर मेरे पति तो उन्हें देखते ही खूंखार हो उठे। उन्होंने चप्पल उठाई और चटाख्-चटाख् सबको रौंद डाला। एक-एक बार में उन्होंने सबका काम तमाम कर डाला था। तब मेरे मन में पहली बार इन केंचुओं के लिए माया-ममता उभर आई थी। उन्हें उस तरह कुचले जाते हुए देखना मेरे लिए बहुत यातनादायक था।

दस दिन हमें एकान्त देकर आखिर इनकी मां और बहन भी अपने घर लौट आई थीं। अब हम रसोई में परदा डालकर सोने लगे थे। रसोई की मोरी को लाख बन्द करो, ये केंचुए आना बन्द नहीं करते थे। पति अक्सर अपनी रेलवे की ड्यूटी पर सफर में रहते और मैं रसोई में। और रसोई में बेशुमार केंचुए थे। मुझे लगता था, मैंने अपनी मां की जगह ले ली है और अब मुझे सारा जीवन रसोई की इन दीवारों के बीच इन केंचुओं के साथ गुज़ारना है। एक दिन एक केंचुआ मेरी निगाह बचाकर रसोई से बाहर चला गया और सास ने उसे देख लिया। उनकी आंखें गुस्से से लाल हो गईं। उन्होंने चाय के खौलते हुए पानी की केतली उठायी और रसोई में बिलबिलाते सब केंचुओं पर गालियां बरसाते हुए उबलता पानी डाल दिया। सच मानो बाबा, मेरे पूरे शरीर पर जैसे फफोले पड़ गये थे, जैसे खौलता हुआ पानी उन पर नहीं, मुझ पर डाला गया हो। वे सब फौरन मर गये, एक भी नहीं, बचा। लेकिन मैं ज़िन्दा रही। मुझे तब समझ में आया कि मुझे अब बांकुड़ा के बिना ज़िन्दा रहना है। पर ऐसा क्यों हुआ बाबा, कि मुझे केंचुओं से डर लगने लगा। अब वे जब भी आते, मैं उन्हें वापस मोरी में धकेलती, पर मारती नहीं। उन दिनों मैंने यह सब तुम्हें ख़त में लिखा तो था, पर तुम्हें मेरे ख़त कभी मिले ही नहीं। हो सकता है, यह भी न मिले। यह मिल भी जाये तो तुम कहो कि नहीं मिला। फोन पर मैंने पूछा भी था- चिट्ठी मिली? तुमने अविश्वास से पूछा - पोस्ट तो की थी या...। मैं हंस दी थी - अपने पास रखने के लिए थोड़े ही लिखी थी।

फोन पर इतनी बातें करना सम्भव कहां है। फोन की तारों पर मेरी आवाज़ जैसे ही तुम तक तैरती हुई पहुंचती है, तुम्हें लगता है, स...ब ठीक है। जैसे मेरा ज़िन्दा होना ही मेरे ठीक रहने की निशानी है। और फोन पर तुम्हारी आवाज़ सुनकर मैं परेशान हो जाती हूं क्योंकि फोन पर मैं तुम्हें बता नहीं सकती कि तुम जिस आवाज़ को मेरी आवाज़ समझ रहे हो, वह मेरी नहीं है। तुम फोन पर मेरा कुशल-क्षेम ही सुनना चाहते हो और मैं तुम्हें केचुओं के बारे में कैसे बता सकती हूं? तुम्हारी आवाज़ से मैं चाहकर भी तो लिपट नहीं सकती। मुझे तब सत्रह सौ किलोमीटर की दूर बुरी तरह खलने लगती है।

इतनी लम्बी दूरी को पार कर डेढ़ साल पहले जब मैं वहां बांकुड़ा पहुंची थी, मुझे लगा था, मैं किसी अजनबी गांव में आ गई हूं जो मेरा नहीं है। मुझे वापस जाना ही है, यह सोचकर मैं अपने आने को भी भोग नहीं पायी। मैंने शिथिल होकर खबर दी थी कि मुझे तीसरा महीना चढ़ा है। मैं आगे कुछ कह पाती कि तुम सब में खुशी की लहर दौड़ गई थी। मां ने मुझे गले से लगा लिया था, बउदी ने माथा चूम लिया था। मैं रोई थी, चीखी थी, मैंने मिन्नतें की थीं कि मुझे यह बच्चा नहीं चाहिए, कि उस घर में बच्चे की किलकारियां सिसकियों में बदल जायेंगी, पर तुम सब पर कोई असर नहीं हुआ। तुम चारों मुझे घेरकर खड़े हो गये... भला पहला बच्चा भी कोई गिराता है, पहले बच्चे को गिराने से फिर गर्भ ठहरता ही नहीं, मां बनने में ही नारी की पूर्णता है, मां बनने के बाद सब ठीक हो जाता है, औरत को जीने का अर्थ मिल जाता है। मां, तुम अपनी तरह मुझे भी पूर्ण होते हुए देखना चाहती थीं। मैंने तुम्हारी बात मान ली और तुम सब के सपनों को पेट में संजोकर वापस लौट गई।

वापस। उसी महाकाली की गुफाओं वाले फ्लैट में। उन्हीं केंचुओं के पास। बस, फ़र्क़ यह था कि अब वे बाहर फर्श से हटकर मेरे शरीर के भीतर रेंग रहे थे। नौ महीने मैं अपने पेट में एक दहशत को आकर लेते हुए महसूस करती रही। पांचवें महीने मेरे पेट में जब उस आकार ने हिलना-डुलना शुरू किया, मैं भय से कांपने लगी थी। मुझे लगा, मेरे पेट में वही बरसाती केंचुए रेंग रहे हैं, सरक रहे हैं। आखिर वह घड़ी भी आई, जब उन्हें मेरे शरीर से बाहर आना था और सच मां, जब लम्बी बेहोशी के बाद मैंने आंख खोलकर अपने बगल में लेटी सलवटों वाली चमड़ी लिये अपनी जुड़वां बेटियों को देखा, मैं सकते में आ गई। उनकी शक्ल वैसी ही गिजगिजी लाल केंचुओं जैसी झुर्रीदार थी। मैंने तुमसे कहा था... देखो तो मां, ये दोनों कितनी बदशक्ल हैं, पतले-पतले, ढीले-ढीले हाथ-पैर और सांवली-मरगिल्ली-सी।

तुमने कहा था, बड़ी बोकी है रे तू, कैसी बातें करती है, ये तो साक्षात् लक्ष्मी-सरस्वती एक साथ आई हैं तेरे घर। तुम सब ने कलकत्ता जाकर अपनी बेटी और जमाई बाबू के लिए कितनी खरीदारी की थी, बउदी ने खास सोने का सेट भिजवाया था। सब दान-दहेज समेटकर तुम यहां आईं और चालीस दिन मेरी, इन दोनों की और मेरे ससुराल वालों की सेवा-टहल करके लौट गईं। इन लक्ष्मी-सरस्वती के साथ मुझे बांधकर तुम तो बांकुड़ा के बांसपुकुर लौट गईं, मुझे बार-बार यही सुनना पड़ा - एक कपालकुण्डला को अस्पताल भेजा था, दो को और साथ ले आई। बाबा, कभी मन होता था- इन दोनों को बांधकर तुम्हारे पास पार्सल से भिजवा दूं कि मुझसे ये नहीं संभलतीं, अपनी ये लक्ष्मी-सरस्वती-सी नातिनें तुम्हें ही मुबारक हों पर हर बार इनकी बिटर-बिटर-सी ताकती हुई आंखें मुझे रोक लेती थीं।

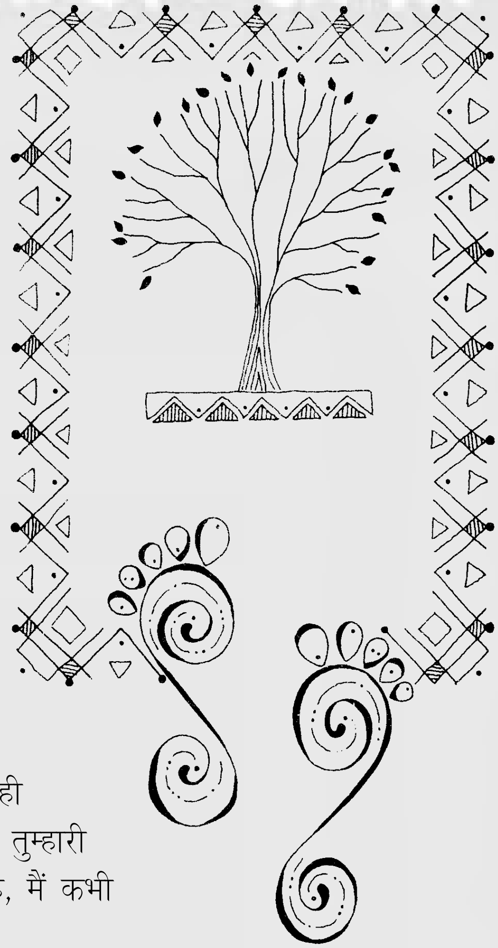

चित्र: बिंदिया थापर

मां, मुझे बार-बार ऐसा क्यों लगता है कि मैं तुम्हारी तरह एक अच्छी मां कभी नहीं बन पाऊंगी जो जीवन भर रसोई की चारदीवारी में बाबला और मेरे लिए पकवान बनाती रही और फालिज की मारी ठाकुर मां की चादरें धोती-समेटती रही। तुम्हारी नातिनों की आंखें मुझसे यह सब मांगती हैं जो मुझे लगता है, मैं कभी उन्हें दे नहीं पाऊंगी।

इन पांच-सात महीनों में कब दिन चढ़ता था, कब रात ढल जाती थी, मुझे तो पता ही नहीं चला। इस बार की बरसात ने आकर मेरी आंखों पर छाये सारे परदे गिरा दिये हैं। ये दोनों घिसटना सीख गई हैं। सारा दिन कीचड़-मिट्टी में सनी केंचुओं से खेलती रहती हैं। जब ये घुटनों से घिसटती हैं, मुझे केंचुए रेंगते दिखाई देते हैं और जब बाहर सड़क पर मैदान के पास की गीली मिट्टी में केंचुओं को सरकते देखती हूं तो उनमें इन दोनों की शक्ल दिखाई देती है। मुझे डर लगता है, कहीं मेरे पति घर में घुसते ही इन पर चप्पलों की चटाख्-चटाख् बौछार न कर दें या मेरी सास इन पर केतली का खौलता हुआ पानी न डाल दें। मैं जानती हूं, यह मेरा वहम है पर यह लाइलाज है और मैं अब इस वहम का बोझ नहीं उठा सकती।

इन दोनों को अपने पास ले जा सको तो ले जाना। बाबला और बउदी शायद इन्हें अपना लें। बस, इतना चाहती हूं कि बड़ी होने पर ये दोनों अगर आसमान को छूना चाहें तो यह जानते हुए भी कि वे आसमान को कभी छू नहीं पाएंगी, इन्हें रोकना मत।

इन दोनों के रूप में तुम्हारी बेटी तुम्हें सूद सहित वापस लौटा रहीं हूं। इनमें तुम मुझे देख पाओगे शायद।

बाबा, तुम कहते थे न - आत्मायें कभी नहीं मरतीं। इस विराट व्योम में, शून्य में, वे तैरती रहती हैं- परम शान्त होकर। मैं उस शान्ति को छू लेना चाहती हूं। मैं थक गई हूं बाबा। हर शरीर के थकने की अपनी सीमा होती है। मैं जल्दी थक गई, इसमें दोष तो मेरा ही है। तुम दोनों मुझे माफ कर सको तो कर देना। इति

तुम्हारी आज्ञाकारिणी बेटी
अन्नपूर्णा मंडल

औरतों का है यह अधिकार हिंसा-मुक्त हो घर-परिवार

घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण कानून, 2005

महिला आन्दोलन ने पिछले 35 सालों में घरेलू हिंसा पर चुप्पी और उसकी सामाजिक मान्यता को चुनौती दी है। आज परिवार में हिंसा-मुक्त जीवन जीने का कानूनी अधिकार हम महिलाएं इस दीवानी (सिविल) कानून के रूप में हासिल कर पाई हैं।

घरेलू हिंसा क्या है?

इस कानून के अंतर्गत घरेलू हिंसा की परिभाषा के तहत वो हिंसा शामिल है जो घरेलू रिश्तों में किसी भी महिला के स्वास्थ्य, सुरक्षा, हित, जीवन, शारीरिक अंग को चोट या मानसिक रूप से हानि पहुंचाती हो। दहेज या अन्य सम्पत्ति की मांग भी इस कानून के तहत दण्डनीय है।

घरेलू रिश्ता क्या है?

ऐसे दो व्यक्ति जो साझे घर में रहते हों या किसी भी समय रहे हों। इनके बीच चाहे खून का रिश्ता हो (मां, बहने, बेटी, एकल महिला, पत्नी), विवाह या विवाह जैसे सम्बन्ध हो, दत्तक बच्चा (गोद लिया हुआ) या संयुक्त परिवार के सदस्य के रूप में रहते आये हों या रहे हों।

हिंसा के प्रकार

1. शारीरिक हिंसा
   - बल का प्रयोग करना (मारपीट करना, ढकेलना इत्यादि)
   - शारीरिक अंग या स्वास्थ्य को हानि पहुंचाना
2. यौनिक हिंसा
   - जबरदस्ती शारीरिक संबंध बनाना, चाहे विवाहित हो या अविवाहित
   - जबरदस्ती अश्लील फिल्में या तस्वीरें दिखाना
   - ऐसा कोई भी यौनिक व्यवहार जो महिला के आत्मसम्मान को ठेस पहुंचाता हो या बेइज्जत करता हो
3. भावनात्मक, मानसिक हिंसा या मौखिक हिंसा
   - ताने देना, फब्ती कसना या तिरस्कार करना मुख्य रूप से संतान या खासकर पुत्र न होने के संबंध में उसका अपमान करना व मज़ाक उड़ाना
   - महिला के परिचित दोस्त और रिश्तेदारों को हानि पहुंचाने की धमकी देना
4. आर्थिक हिंसा
   - महिला और बच्चों के पालन पोषण के लिए खर्चा न देना
   - अगर किराये के घर पर रह रहे हैं तो घर का किराया न देना
   - महिला के रोजगार पर रोक लगाना या उसमें रुकावट डालना

घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण कानून, 2005 के तहत महिला इन मुख्य आदेश व राहत प्राप्त कर सकती है

- हिंसा पीड़ित महिला की मजिस्ट्रेट के सामने सुनवाई के बाद मजिस्ट्रेट की ओर से सुरक्षा आदेश जारी होंगे। हिंसाकर्ता पर रोक लगाई जाएगी कि वह कोई हिंसात्मक व्यवहार महिला के साथ न करे, चाहे घर में हो या कार्यस्थल पर हो व किसी भी माध्यम से महिला को सम्पर्क करने की कोशिश न करें।
- शिकायतकर्ता को महिला के संयुक्त परिवार में रहने का अधिकार के आदेश पर हिंसाकर्ता को महिला से मिलने या संपर्क के प्रयास पर रोक लगाई जा सकती है। गम्भीर स्थिति में हिंसाकर्ता को सांझे घर से हटने का आदेश भी दे सकते हैं।
- आर्थिक राहत के तहत आजीविका, शारीरिक व मानसिक और सम्पत्ति में हुई हानियों की भरपाई, दवा का खर्च, व प्रतिमाह के खर्चों के आदेश हो सकते हैं।
- 18 साल से कम उम्र के बच्चों को मां के साथ सुरक्षित रहने का आदेश मिल सकता है (अगर मां चाहे)। स्थिति के अनुसार मजिस्ट्रेट यह तय करेंगे कि हिंसाकर्ता समय-समय पर बच्चों से मिल सकते हैं या नहीं।

औरतों ने अब यह ठाना है हिंसा-मुक्त जीवन पाना है।

जागोरी JAGORI

सम्पर्क करें: जागोरी, बी-114 शिवालिक, मालवीय नगर, नई दिल्ली-110017
फोन नं: 26691219, 26691220, फैक्स: 26691221
E-mail: helpline@jagori.org, Website: www.jagori.org

घरेलू हिंसा कानूनः एक समीक्षा

अस्मिता बासु

महिलाओं के ख़िलाफ़ हिंसा ऐतिहासिक रूप से स्त्री-पुरुष के बीच असमान सत्ता संबंधों की अभिव्यक्ति है। यह महिलाओं के साथ भेदभाव, उन पर शासन करने की प्रवृत्ति को बढ़ावा देती है और उनके सम्पूर्ण विकास में अवरोध पैदा करती है। महिलाओं पर हिंसा उन्हें पुरुषों की तुलना में एक कमतर व निचले दर्जे की ओर धकेलने का एक महत्वपूर्ण सामाजिक कारक है।

-महिलाओं के विरुद्ध हिंसा बहिष्करण घोषणापत्र 1993

घरेलू हिंसा कानून 2005, 26 अक्तूबर 2006 को पारित किया गया था। यह कानून महिला आंदोलन द्वारा संचालित सतत अभियान का नतीजा था और इसे तैयार करने में कार्यकर्त्ताओं ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी। हालांकि इस कानून के प्रभाव को आंकने के लिए यह समय उचित नहीं है परन्तु इसके लक्ष्यों व तर्कों पर एक नज़र डालने से हम भविष्य में इसकी सफलता का अंदाज़ा लगा सकते हैं। पर सबसे पहले ज़रूरी है *घरेलू हिंसा कानून* से जुड़े कुछ महत्वपूर्ण सवालों पर चर्चा।

सबसे पहला सवाल है- घरेलू हिंसा पर एक अलग अधिनियम की ज़रूरत क्यों पड़ी? पहली बात, असमान संबंधों का बरकरार रखने के लिए हिंसा के इस्तेमाल का महिला आंदोलन ने राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पुरज़ोर विरोध किया है। कानूनी दायरे में रहते हुए इस संघर्ष के चलते फौजदारी कानूनों में संशोधन किए गए थे। विवाह संबंधों में क्रूरता (धारा 498ए भारतीय दंड संहिता), दहेज विरोधी कानून 1961 दहेज मृत्यु व उत्पीड़न का अपराधीकरण (भारतीय दंड संहिता, धारा 304बी)

आदि इसी संघर्ष का नतीजा हैं। इसके अलावा नागरिक व व्यक्तिगत कानूनों में 'क्रूरता' को तलाक़ के जायज़ अधिकार के रूप में मान्यता, अभावगस्त होने पर गुज़ारा भत्ता (धारा 125) तथा आदेशार्थ सहायता के प्रावधानों को भी सूत्रबद्ध किया गया। पर अंतरंग संबंधों में हिंसा को रोकने में ये प्रावधान कारगर साबित नहीं हो पाए क्योंकि इन प्रावधानों का सिर्फ़ विवाहित महिलाएं ही उपयोग कर सकती थीं। दूसरी बात, फौजदारी कानून दोषियों का सज़ा देने की दिशा में ही सक्षम है पर इसमें आवास, गुज़ारा भत्ता या मुआवज़े का प्रावधान नहीं था। तीसरा, नागरिक कानूनों का उपयोग लंबा और काफी समय तक चलता है जिस दौरान महिला के लिए राहत पाने की कोई गुजांइश नहीं होती।

इन कानूनों की एक बड़ी कमज़ोरी यह भी थी कि इसमें रिहाइशी हक़ का प्रावधान नहीं था। कानून के अनुसार घर में रहने का हक़ उसी के पास है जिसके पास कानूनी मिल्कियत हो या जिसके नाम पट्टा हो। इसका अर्थ यह हुआ कि आश्रित पत्नी या बेटी को घर से बाहर निकालना आसान है। इस कमज़ोरी ने औरतों को घरेलू हिंसा सहते हुए निराश्रय और बेसहारा होने के डर से खामोश रहने के लिए बाध्य कर दिया था।

वास्तविकता यह भी थी कि जब-जब महिलाओं ने फौजदारी कानून के तहत हिंसा का केस दर्ज किया तो परिवारवालों द्वारा उन्हें घर से बाहर निकाल दिया गया। पारिवारिक सहयोग और सुरक्षित आश्रय के अभाव ने महिलाओं को समझौते और केस वापस लेने के लिए मजबूर कर दिया। सवाल वही था- मूल सुविधाओं और राहतों के अभाव में औरतें बड़ी चुनौतियां लेने का साहस कहां से जुटातीं?

इस बात में कोई शक नहीं हैं कि घर में रहने का बुनियादी अधिकार मुहैय्या न होने पर एक ऐसा समाधान ज़रूरी था जो हिंसा सम्बोधित करने के साथ-साथ रिहाइशी अधिकार भी दिलाए। इस संदर्भ में एक ऐसे कानून की ज़रूरत महसूस की गई जो कानूनी प्रतिकार तलाशने वाली महिलाओं के सरोकारों पर ध्यान दे सके।

दूसरा सवाल है- क्या घरेलू हिंसा कानून सिर्फ़ महिलाओं के हित के लिए बनाया जाएगा या फिर यह अंतरंग संबंधों में रहने वाले स्त्री-पुरुष दोनों के लिए होगा। बहरहाल ज़रूरत सिर्फ़ महिला केंद्रित कानून की महसूस हुई क्योंकि अपने असमान दर्जे के कारण औरतें हिंसा का शिकार अधिक होती हैं। पुरुषों को प्रतिकार के लिए अन्य कानून उपलब्ध हैं पर औरतों के साथ सदियों से हो रहे भेदभाव व न्याय तक उनकी पहुंच सुरक्षित करने के लिए एक अलग कानून निहायत ही ज़रूरी था।

तीसरा सवाल है, घरेलू हिंसा की व्यापक परिभाषा क्या होगी जिसमें हिंसा के विविध आयाम - शारीरिक, मौखिक, भावनात्मक, यौनिक व आर्थिक सम्मिलित हों। इसके अलावा कानून के दायरे के अंतर्गत हिंसात्मक संबंधों में रहने वाली अविवाहित महिलाओं यानी बेटी, बहन, विधवा, मां, भाभी या बगैर विवाह साथ रहने वाली महिलाओं की सुरक्षा के लिए क्या किया जाए?

चौथा सवाल था कि घरेलू हिंसा सुरक्षा कानून नागरिक कानून की श्रेणी में हो या फौजदारी कानून की। औरतों को राहत दिलवाने के मकसद से बनाये कानून का स्वरूप नागरिक होना चाहिए। परन्तु लम्बे समय की कानूनी प्रक्रिया से बचने के लिए आपातकालीन राहत की ज़रूरत महसूस हुई। लिहाज़ा यह एक नागरिक कानून की तरह सूत्रबद्ध किया गया जिसमें फौजदारी प्रक्रिया का इस्तेमाल

राहत पाने के लिए किया जा सकता है। इस कानून से जुड़ी शिकायतें सत्र अदालत में मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश की जाएंगी। अदालत के आदेश का पालन न करने पर आपराधिक कार्यवाई की जाएगी।

इन सभी विचारों को ध्यान में रखकर *घरेलू हिंसा कानून 2005* सूत्रबद्ध किया गया। यह कानून महिलाओं को घरेलू हिंसा से सुरक्षा प्रदान करने के लिए नागरिक व फौजदारी कानूनों को सम्मिलित करके बनाया गया है। इससे पहले सभी कानून फौजदारी कानूनों में संशोधन करके बनाए गये थे। पर यह एक ऐसा पहला नागरिक कानून है जिसमें राहत व मुआवज़े की ज़रूरत को ध्यान में रखा गया है।

यह कानून 2005 से पूर्व बनाए सभी कानूनों के साथ तालमेल बनाकर काम करता है। इसके प्रावधानों के ज़रिए महिलाएं एक हिंसा मुक्त भविष्य के लिए, समानता के साथ संघर्ष कर सकती हैं। और इसके तहत महिला को एक हिंसा मुक्त जगह पाने के लिए मूल सुविधाओं का मौजूद होना निर्धारित किया गया है। यानी इस कानून के तहत मिली राहत आपातकालीन व अस्थाई है। समस्या का स्थाई समाधान व्यक्तिगत कानून की मदद से ही पाया जा सकेगा जिसमें महिला को तय करना होगा कि वह हिंसक संबंधों में रहना चाहती है या नहीं। ऐसा करके इस कानून ने महिला समानता की दिशा में एक महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

अब हम इस नए कानून द्वारा महिलाओं को मिलने वाली राहत के स्वभाव को समझने का प्रयास करते हैं। इस कानून द्वारा अधिकारों के हनन के एवज में राहत प्रदान की गई है, यानी सबसे पहले एक हिंसा मुक्त माहौल में रहने का बुनियादी अधिकार महिला को मिलना चाहिए। इस कानून ने घरेलू हिंसा को परिभाषित करने के साथ-साथ महिलाओं को घर में रहने तथा अवैध बेदखली से सुरक्षा की भी बात की है। ऐसा नहीं है कि इस रिहाइशी हक़ की बात पहली बार की गई है। कई कानूनों में पत्नी को यह अधिकार दिया गया है कि वह गुज़ारा भत्ता पाने के तहत अपने विवाहित घर में रह सकती है। पर इस अधिकार को एक प्रशासनिक ढांचे के तहत *घरेलू हिंसा कानून* 2005 में पहली बार दर्ज किया गया है।

पर इस रिहाइशी हक़ को सम्पत्ति अधिकार की तरह नहीं नहीं देखा जा सकता। यह महिला को अपने घर से जबरन

बेदखली से सुरक्षा मुहैय्या कराता है पर उसे जायदाद पर अधिकार नहीं देता। औरत यहां पर अधिकार के साथ रह सकती है और पुरुष उसे कानूनी रास्ता चुनने के लिए सज़ा के तौर पर घर के बाहर नहीं निकाल सकता।

कानून के प्रावधानों को मद्देनज़र रखते हुए महिला को इस कानून के तहत मिलने वाले अधिकार हैं- सुरक्षा आदेश, रिहाइशी आदेश, आर्थिक राहत पाने का आदेश जिससे हिंसा के कारण होने वाले खर्चों का वहन किया जा सके, मुआवज़े का आदेश तथा अस्थाई अभिभावक होने का आदेश जिससे बच्चों से मिलने-जुलने पर रोक न लगाई जा सके।

अब आगे आने वाला प्रश्न यह है कि महिला को ये राहतें कैसे मुहैय्या होंगी? महिलाओं के लिए अदालत जाना एक समस्या है। साथ ही अपने ही परिवार के ख़िलाफ़ कार्यवाई करना और अधिक कठिन हो जाता है। आदेश मिल जाने पर उनका कार्यान्वयन भी आसान नहीं होता। इन सरोकरों से निपटने के लिए सुरक्षा अधिकारी का पद निर्धारित किया गया जो महिला की कानूनी, चिकित्सीय सुविधाएं व आश्रय जैसी सेवाएं तथा अदालत की कार्यवाई और आदेशों के पालन में सहयोग करें। इसके अतिरिक्त इस कानून में सेवादाताओं के पंजीकरण का भी प्रावधान है जो महिला अधिकारों पर कार्यरत समूह, स्वयंसेवी संगठनों व महिला हिंसा विरोधी मंच के सदस्यों को मान्यता व कानूनी सुरक्षा प्रदान करता है।

हालांकि *घरेलू हिंसा कानून* इन तमाम सरोकारों को मान्यता देते हुए सूत्रबद्ध किया गया है फिर भी उसके कार्यान्वयन पर ज़ोर देना बहुत महत्वपूर्ण है जिससे महिलाओं को समूचित अधिकार मिलें। *लायर्स क्लैक्टिव,* महिला अधिकार समूह ने इस कानून के कार्यान्वयन की समीक्षा करते हुए एक *निगरानी व मूल्यांकन रिपोर्ट 2007* की रचना की है। इस रिपोर्ट से कोई निष्कर्ष तो नहीं निकाले जा सकते पर इस कानून के कार्यान्वयन में उभरने वाले आयामों पर गौर अवश्य किया जा सकता है।

इस रिपोर्ट के अनुसार लगभग सभी राज्यों में सुरक्षा अधिकारियों की नियुक्ति की जा चुकी है। पर बदकिस्मती से मौजूदा सरकारी अफसरों को ही यह पद संभालने की ज़िम्मेदारी सौंपी गई है। प्रशिक्षण, ढांचे और सहयोग की कमी भी देखी गई है। कुछ राज्यों में सेवादाताओं का पंजीकरण भी किया गया है। उदाहरण के तौर पर आंध्रप्रदेश में पुलिस की अगुवाई से सुरक्षा अधिकारी, कानूनी सहायता अधिकारी तथा सेवादाता एक संयोजित समूह के रूप में, एक साथ मिलकर महिलाओं का राहत दिलवाने में मदद करते हैं।

जून 2007 के अंत तक आठ हज़ार केस अदालत में दर्ज किए जा चुके थे और काफी महिलाओं ने सफलतापूर्वक सुरक्षा आदेश हासिल किए हैं। यह हैरानी की बात है कि सबसे अधिक मामले राजस्थान में दर्ज किए गए हैं जहां अभी ढांचागत सुविधाएं कम हैं। इसका अर्थ यह है कि महिलाएं अपने वकीलों की मदद से इस कानून के तहत अपने अधिकार मांग रही हैं। इस कानून का एक खास प्रावधान यह है कि हर मामले की सुनवाई साठ दिनों के अंदर होनी आवश्यक है। इससे इन मामलों को जल्दी निपटाने में सुविधा होती है।

इस रिपोर्ट से उभरने वाली एक अन्य सच्चाई है मजिस्ट्रेटों द्वारा दिये जाने वाले सुरक्षा आदेशों की विविधता। चूंकि इस कानून का उपयोग अधिकतर विवाहित महिलाएं कर रही हैं इसलिए मजिस्ट्रेट भी अधिकांश समय गुज़ारा भत्ता आदेश पारित करते हैं। पर एक अच्छी बात यह है कि विधवा महिलाएं व मांएं भी रिहाइशी आदेश हासिल कर रहीं है जो पहले संभव नहीं था। महिलाओं को मिलने वाले आदेशों में भी विविधता नज़र आती है। उदाहरण के लिए राजस्थान में महिलाओं ने अपने विवाहित घरों में रिहाइशी अधिकार हासिल किये हैं जबकि केरल में महिलाओं ने पति को घर से दूर रखने के आदेश हासिल किए हैं। पर इस विविधता के पीछे के कारणों को समझने में अभी कुछ और वक्त लगेगा।

यद्यपि कुछ मुद्दे ऐसे हैं जिनका ध्यान हमें आने वाले समय में विशेष रूप से करना होगा। पहला, काफी मामलों में घरेलू हिंसा के केस को परामर्शदाताओं के पास भेजा जा रहा है जिससे पति-पत्नी के बीच समझौता हो सके। यह धारणा *घरेलू हिंसा कानून* के विरुद्ध जाती है जो घरेलू हिंसा को मानव अधिकार हनन के रूप में देखता है तथा जिसमें परामर्श की सीमा हिंसा को बंद कराने तक सीमित है। दूसरा, सर्वोच्च न्यायालय के 'बत्रा निर्णय' ने रिहाइशी हक़ को बेहद संकुचित दायरे में सीमाबद्ध कर दिया है। इस फैसले के अनुसार रिहाइशी आदेश सिर्फ़ पति की सम्पत्ति पर ही हासिल किया जा सकता है। यह निर्णय इस सच को पूरी तरह नज़रअंदाज़ करता है कि हमारे देश में अधिकतर विवाहित स्त्री-पुरुष अपने माता-पिता के साथ रहते हैं।

और अंततः *घरेलू हिंसा कानून* के प्रति विरोध के स्वर काफी मुखर है। पुरुष संगठन महिलाओं द्वारा इस कानून का दुरुपयोग करने का दावा कर रहे हैं। पर इस बात का कोई कानूनी या शोध आधार नहीं है। इसके विपरीत राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वे-3, के आंकड़े दर्शाते हैं कि 37% विवाहित व 16% अविवाहित महिलाएं घरेलू हिंसा का शिकार होती हैं पर इनमें से केवल 2% इससे निजात पाने के लिए शिकायत दर्ज कराती हैं या किसी ढांचागत संस्थान से सहयोग लेती हैं।

> इस कानून की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि समाज व नीति निर्माता घरेलू हिंसा को मानव अधिकार हनन के रूप में देखें और इसे महज घरेलू झगड़ा मानकर नज़रअंदाज़ न करें। यह कानून व्यवहार के कुछ स्पष्ट मानक स्थापित करता है जिसमें हिंसा के लिए कोई जगह नहीं है। पर कानून सिर्फ़ सामाजिक परिवर्तन लाने का एक माध्यम भर हो सकता है। हिंसा को जड़ से मिटाने के लिए ज़रूरी है कि महिलाओं को समाज में बतौर समान नागरिक स्वीकारा जाए।

घरेलू हिंसा कानून का क्रियान्वयन समाज कल्याण मंत्रालय का दायित्व है। खण्ड आठ के तहत इस कानून में सहयोग के लिए सुरक्षा अधिकारियों की नियुक्ति की गई है। दिल्ली के सभी ज़िला क्षेत्रों के सुरक्षा अधिकारियों के नाम व पते की सूची निम्न है।

क्रमांक	नाम/पता	ज़िला	फोन	फैक्स
1.	सुश्री बिनीता बहुगुणा/सुश्री नीलम 20/21 गुलाबी बाग शॉपिंग कॉम्पलैक्स, दिल्ली	उत्तर	23652304	23655002
2.	सुश्री कविता शर्मा/सुश्री अंजली चौधरी निर्मल छाया कॉम्पलैक्स जेल रोड, नई दिल्ली	पश्चिम	25547952	25534583
3.	सुश्री परमेश टोकस उद्योग सदन, कुतुब इंस्टीट्यूशनल एरिया कुतुब होटल के पास, नई दिल्ली	दक्षिण-पश्चिमी	26529019	26528175
4.	सुश्री किरण शर्मा/सुश्री रंजना सिंह कस्तूरबा निकेतन, लाजपत नगर नई दिल्ली	दक्षिण	29819812	29810892
5.	सुश्री प्रीति मुद्गल ब्लॉक नं. 10, गीता कॉलोनी शमशान घाट के सामने नई दिल्ली	पूर्वी	22450147 22792102	22450151
6.	सुश्री दीक्षा/सुश्री नेहा वालिया संस्कार बालिका आश्रम, दिलशाद गार्डन गुरु तेगबहादुर अस्पताल के सामने, दिल्ली	उत्तर-पूर्वी	22133765	22582253
7.	सुश्री मधु मानवी 12/1 जाम नगर हाउस शाहजहां रोड, नई दिल्ली	नई दिल्ली	23071093	23071094
8.	सुश्री प्रीति सक्सेना जीएलएनएस कॉम्पलैक्स दिल्ली गेट, नई दिल्ली	केन्द्रीय	23318323	-
9.	सुश्री कीर्ति ढाका/सुश्री स्नेह आर्या/सुश्री किरण एनपी स्कूल फ़ॉर डैफ़, सेक्टर-4 रोहिणी, नई दिल्ली	उत्तर-पश्चिमी I	27933961 24371697	27040844
10.	सुश्री ज्योति सिरोही/सुश्री नीरज चौहान के/5/3 मॉडल टाउन III, दिल्ली	उत्तर-पश्चिमी II	27933961	27410018

मर्दाना ज़नाना

हम क्या सुनते हैं?

राहुल रॉय

कुछ आवाज़ें दूर तक सुनाई नहीं पड़तीं, कुछ सुनकर भी अनसुनी कर दी जाती हैं। कुछ आवाज़ों की फुसफुसाहट दूर तक पहुंच जाती है पर कुछ चीखें भी दबकर रह जाती हैं। दीवारों और बहरे कानों से टकराकर वापस लौट आने वाली ये आवाज़ें आखिर सुनी क्यों नहीं जातीं? शायद इसलिए क्योंकि ये आवाज़ें ज़नानी हैं। औरत के पेट की गहराई से उठकर दर्द से सराबोर, घुटकर बाहर निकलती हुई। ये खामोशी को चीरकर न्याय और सहयोग की मांग करती हैं और किसी नाइंसाफ़ी को चुनौती देती हैं।

पर आवाज़ें किसी शून्य में सुनाई नहीं देतीं। उनकी गूंज को ध्वनि बनाकर हमारे कानों तक लाने के लिए दिमाग को इन्हें समझना होता है। कुछ इसी तरह की साज़िश घरेलू हिंसा को लेकर भी हमारे सामने मुंह बाए खड़ी रहती है। घरेलू हिंसा की चीखें अनसुनी रहती हैं, चोटें अदृश्य और जुबान मूक। ये आवाज़ें किसी अंधे कुएं से टकराकर लौट आती हैं। हमारे समाज ने गांधीजी के तीन बंदरों वाली कहानी को गहराई से अपना जो लिया है।

पर ये साज़िश क्या है? हमारे असमान ढांचे में ऐसा क्या है जो पुरुषों को हिंसा की भाषा बोलने और उसे व्यावहारिक तौर पर इस्तेमाल करने की इज़ाज़त देता है? नतीजे बौखला देने वाले हैं। दक्षिण एशिया की बात तो छोड़ दें, अमरीका जैसे विकसित देश में भी हर तीसरी महिला घरेलू हिंसा झेलती है।

पर ऐसा क्यों है? इसका उत्तर वही घिसा-पिटा नहीं हो सकता कि पुरुष अपनी कुंठा निकालने के लिए अपनी पत्नी के साथ हिंसा करता है। बाहरी दुनिया का तनाव, शोषण ज़्यादा से ज़्यादा एक बहाना मात्र हो सकता है पर असल वजह इससे कहीं अलग है।

हर हिंसा करने वाला व्यक्ति जानता है कि उसका व्यवहार गलत, नाजायज़ व औरतों के अधिकारों का उल्लंघन करने वाला होता है। हिंसा की असली वजह असमान संबंधों, सत्तात्मक ढांचों को सीमाओं के भीतर बरकरार रखने के प्रयासों में निहित है। हिंसा और मर्दानगी का पुराना गठबंधन है जो इन दोनों को एक दूसरे का पूरक बनाता है। एक के बिना दूसरा पनप नहीं सकता।

घरेलू हिंसा जैसी व्यापक सच्चाई को महज़ पुरुष सहनशक्ति की आक्रामक अभिव्यक्ति कहकर नहीं टाला जा सकता। अधिकांश शोध अध्ययन इस तथ्य को रेखांकित करते हैं कि घरेलू हिंसा सत्ता की अभिव्यक्ति है। मर्दानगी द्वारा मर्दों को सत्ता की कगार पर धकेलने वाली एक न बुझने वाली प्यास है जो उनके जीवन में सदैव बनी रहती है। पुरुष होने का अभिप्राय होता है इस सत्ता का अनुभव, इस एहसास के साथ जीना कि यह सत्ता जन्म से ही आपकी है, यह आपकी रग-रग में बहती है।

और ये मर्दानगी उस बाहरी दुनिया के साथ तालमेल बैठाने का प्रयास करती है जहां के सत्ता संबंध संघर्ष, पदानुक्रम और पिरामिडी होते हैं। यहां वर्ग, जाति, संस्कृति, भाषा, यौनिकता और न जाने कितने ही रूपों में संघर्ष विद्यमान हैं। और संघर्ष में हार-जीत होती है। मर्दानगी इन संघर्ष में चिकनाई का काम करती है। इन्हें असली और वास्तविक बनाती है। हिंसा के ज़रिए दुनिया में इनकी अभिव्यक्ति को प्रोत्साहित करती है। आक्रोश, आक्रामक व्यवहारों से दुश्मन पर अपनी सत्ता और ताकत का प्रत्यक्ष प्रमाण छोड़ने में मदद करती है।

इस जटिल ताने-बाने को और अधिक पेचिदा बनाती है समाज में व्याप्त पितृसत्ता। महिलाओं के श्रम और शरीर पर नियंत्रण रखने के लिए आवश्यक है बल का प्रयोग, सुरक्षा का वादा व बाहरी दुनिया से महफ़ूज़ रखे जाने का विश्वास! इस आनन-फानन सफर में पुरुष व स्त्री विवाह के संबंध में बंधकर एक खुशहाल जीवन जीने के लिए जुट जाते हैं।

यह बात और है कि हमारे देश के अधिकांश स्त्री-पुरुषों के लिए विवाह एक ऐसा समय है जिस दौरान वह एक नये रिश्ते को बनाने और गढ़ने की कोशिश करते हैं। रिश्ते को संवारने का प्रशिक्षण और अनुभव दोनों उनके पास नहीं होते। ज़्यादा से ज़्यादा वे अपने आसपास मौजूद संबधों जैसे माता-पिता, पड़ोसी या रिश्तेदार से कुछ सीख ले सकते हैं। और इन रिश्तों में उन्हें असमानता, हिंसा और सत्ता के ढांचों को बरकरार रखने के प्रयास दिखाई देते हैं।

कुछ अपवादपूर्ण संबंध जहां हिंसा व असमानताएं मौजूद न हों भी सामने हो सकते हैं। पर लगभग बाकी सभी के लिए रास्ते संकरे, सीमित व पारम्परिक होते हैं जिनमें असमानता व हिंसा जड़वत् होती है।

ऐसा नहीं है कि पुरुषों के गुणसूत्रों की बनावट मुड़ी-तुड़ी या हिंसा अधोमुखी होती है। बल्कि 'असली मर्द' के मानदण्डों को पाने व उन पर खरा उतरने की जद्दोजेहद पुरुषों को बाहरी दुनिया, महिलाओं व खुद अपने साथ एक संघर्षमय संबंध के तहत जीने के लिए बाध्य कर देती है। जब मर्दानगी

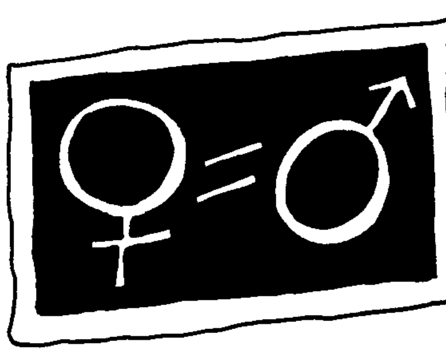

का पाठ पुरुषों के लिए स्कूल, जाति, वर्ग, पुलिस व अन्य संरचनाओं के माध्यम से दोहराया जाता है तब दुनिया में एक सम्मानयुक्त जीवन जीने के लिए हिंसा का ही एक मात्र रास्ता नज़र आता है। अपनी मर्दानगी को सुरक्षित रखने व इसे सभी खतरों से दूर रखने के लिए इसकी अभिव्यक्ति का सबसे आसान माध्यम है घर व उससे रहने वाली महिला। और उन्हें यहां पर प्रतिक्रिया और प्रतिवाद का भी कोई डर नहीं रहता।

तो क्या इन सब बातों का अर्थ यह हुआ कि अपने समुदाय, घर, विवाह और संबंधों में से हिंसा को दूर करने के लिए हमें एक समान दुनिया की रचना होने तक इंतज़ार करना पड़ेगा? शायद नहीं, क्योंकि अगर हम अपने आसपास देखें तो हमें ऐसे बहुत से पुरुष नज़र आएंगे जो हिंसा नहीं करते। ऐसे रिश्ते भी मिलेंगे जिनमें परस्पर प्यार व सम्मान है और जहां लोग एक दूसरे को चोट पहुंचाने की कल्पना भी नहीं कर सकते। तो शायद विभिन्न सामाजिक पदानुक्रमों को चुनौती देने के लिए प्यार ही सबसे सशक्त जवाब है और इसलिए प्यार को एक खतरा भी समझा जाता है। इसे कुचलने के लिए 'कारो कारी' (सम्मान के नाम पर की जाने वाली हत्याएं) आम हो गई हैं।

तो अब समय आ गया है जब पुरुष प्रेम के बारे में अधिक सोचें और साथ ही इस प्रेम को सहेज कर रखने की भी कोशिश करें। इसे नफ़रत और असमानताओं के दबाव से कुंभलाने न दें। अब जब हम भेदभाव, न्याय और समान दुनिया की मांग करें तो इसमें प्रेम की मांग पर भी ज़ोर डालें क्योंकि जब हम किसी को प्यार करते हैं तो उसे चोट पहुंचाने के बारे में नहीं सोचते।

यह विडम्बना ही तो है कि हिंसा और प्रेम दोनों ही आवाज़ें अनसुनी और अदृश्य बना दी जाती हैं... इसलिए इन दोनों को समाज के उस केंद्र में खींच लाने की ज़रूरत है जहां ये मुखर और स्पष्ट सुनाई दें।

हिंसा-अन्दर और बाहर-कब तक?

कल्पना शर्मा

आठ मार्च, अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस एक ऐसा दिन है जब दुनिया भर में महिलाएं अपने अधिकारों को दोहराकर उमंग व जश्न मनाती हैं। मैंने सोचा था कि इस दिन को याद करके मैं भी कुछ उत्साही लिख पाऊंगी। पर भारत के सकारात्मक विकास को धूमिल करती काली परछाइयां कहीं भी पीछा नहीं छोड़तीं।

महिलाओं से संबंधित कुछ चौंकाने वाली बातों पर मीडिया ने कुछ रोशनी डाली है। पर उन्हें मंगलौर के पब में 24 जनवरी को औरतों पर हुए हमले की तरह सुर्खियों में स्थान नहीं मिला। इन औरतों पर बदसलूकी करने वाले गुण्डे अपने साथ टेलिविज़न क्रू नहीं ले गए थे। पर 17 फरवरी के दिन, अंतर्राष्ट्रीय कहे जाने वाले बंगलौर शहर में उन औरतों के साथ हिंसा की वारदातें हुईं जो अपने काम से काम रखकर केवल वही कर रही थीं जो एक आम नागरिक करता है- काम पर जाना, सड़क पर चलना, सरकारी बस में चढ़ना। पर इन औरतों पर अचानक कुछ पुरुषों ने हमला बोल दिया। इन पुरुषों ने औरतों पर थूका, उनके साथ मारपीट की, कपड़े फाड़ने की कोशिश की और गालियां दीं।

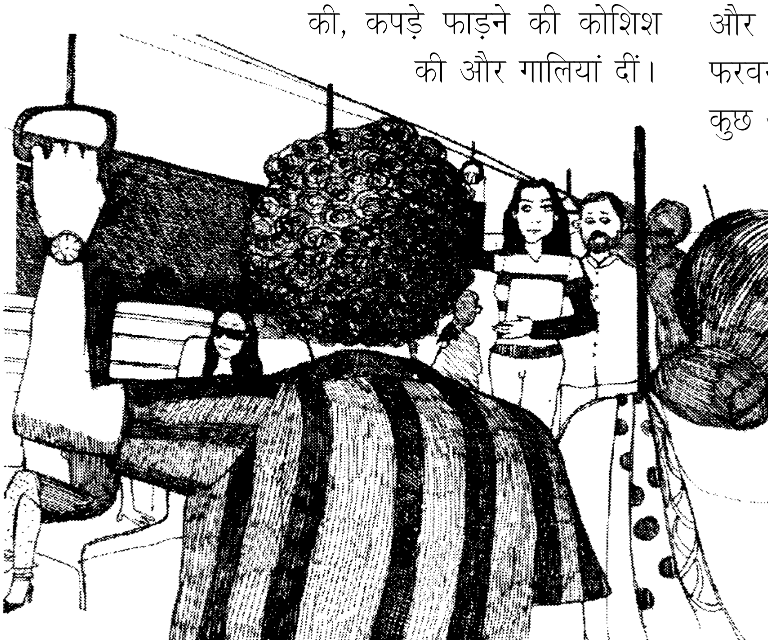

मोटर साइकिल पर सवार दो आदमियों ने इनमें से एक महिला जो कार चला रही थी का भरी दोपहरी में पीछा किया। फिर बीच बाज़ार में उसे रुकने पर मजबूर कर दिया और उस पर थूका। उनसे बचने के लिए वह भागकर एक बिल्डिंग में छुप गई। वे लगातार उसका पीछा करते रहे और कन्नड़ में उसे गालियां भी देते रहे। तंग आकर उस महिला ने उन्हें वापस कन्नड़ में गालियां दी। इस पर उन्होंने उसे धमकाया कि उसकी गाड़ी का नम्बर उन्होंने नोट कर लिया है और वे उसे छोड़ेंगे नहीं।

उसी सुबह दस बजे चार पुरुषों ने एक दूसरी औरत का पीछा किया। उन्होंने आरोप लगाया कि वह श्रीराम सेना के ख़िलाफ़ *गुलाबी चड्डी अभियान* का साथ दे रही है। इत्तिफाक से दो सेना के जवान वहां पहुंच गए और महिला की मदद की।

इसी दिन एक तीसरी महिला जो एक फ़िल्म निर्माता है पर भी हमला हुआ। कुछ आदमियों ने ऑटोरिक्शा से उसे बाहर खींचने की कोशिश की पर वह बच निकली और उसने थाने में शिकायत दर्ज कराई। इसी तरह 28 फरवरी को एक महिला पत्रकार को ऑटो में बैठते समय कुछ अनजान लोगों ने चेहरे पर घूंसा मारा। पर इन सभी महिलाओं के साथ इस हिंसा का बदसलूकी की वजह क्या थी?

इन सभी महिलाओं ने इन वारदातों के दिन 'पश्चिमी' लिबास पहने थे। इन घटनाओं का एक दुखद पहलू यह भी था कि सड़क पर बड़ी तादाद में लोगों की मौजूदगी होने के बावजूद ये घटनाएं घटीं। किसी ने भी इन महिलाओं की मदद करने की कोशिश नहीं की। केवल दो सैनिकों ने ही हिम्मत दिखाई। बाकी सब मूक दर्शक बने रहे। आखिर हमारे समाज को क्या हो रहा है? क्यों

हम सभी बेरुखी और डर से ग्रस्त हैं। इस हिंसा का अंत कहां होगा?

बंगलौर की औरतों ने *निर्भीक कर्नाटक अभियान* के माध्यम से इन हिंसक और डरपोक पुरुषों से टक्कर लेने का बीड़ा उठाया है जो व्यक्तिगत औरतों को अकेला जानकर उन पर हमला करते हैं। पर ये अभियान पूरे देश में चलाया जाना चाहिए। आज कर्नाटक की महिलाओं पर हमला हो रहा है, कल यही किसी दूसरे शहर या कस्बे में हो सकता है। हालांकि सार्वजनिक स्थलों पर महिलाओं की सुरक्षा को लेकर काफी शहरों में एक चेतना फैली है परन्तु यह हिंसा का एक नया रूप है। इसमें सार्वजनिक क्षेत्र में औरतों पर हिंसा की जा रही है जिससे वे डरकर घर के अन्दर रहने को बाध्य हो जाएं। यह उन्हें घर की चारदीवारी में कैद रखने की एक चिन्ताजनक साज़िश है।

हिंसा का एक दूसरा भयावह रूप वह है जो औरतें घर के सुरक्षित वातावरण में झेलती हैं। हाल ही दो शोध अध्ययनों में समाज में बढ़ती घरेलू हिंसा की सच्चाई से हमें अवगत कराया है। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वे पहले से ही इस सच्चाई को प्रमाणित कर चुके हैं।

भारतीय जनसंख्या अध्ययन संस्थान व जनसंख्या समिति के शोध अध्ययनों ने विवाहित महिलाओं के साथ ससुराल में होने वाली घरेलू हिंसा में बढ़ोत्तरी की ओर संकेत दिए हैं। बिहार, झारखंड, राजस्थान, आंध्रप्रदेश, महाराष्ट्र व तमिलनाडु के 15 से 29 वर्ष के, 8052 पुरुषों व 13912 स्त्रियों के साथ साक्षात्कार के दौरान पता चला कि बिहार में 30% व राजस्थान में 18% विवाहित औरतें घरेलू हिंसा झेलती हैं। इन राज्यों में होने वाली घरेलू हिंसा में बांह मरोड़ना, बाल खींचना, धक्का देना, झकझोरना, कुछ फेंककर मारना, लातें-घूंसे मारना, घसीटना, जबरन जलाने या गला घोंटने की कोशिश या डंडे, चाकू, बन्दूक या अन्य हथियार से जानलेवा हमले शामिल हैं।

इसके अतिरिक्त शादी की पहली रात या शादी के दौरान ज़बर्दस्ती संभोग भी घरेलू यौन हिंसा में शामिल किया जाता है। 18 से 20 प्रतिशत महिलाओं ने वैवाहिक जीवन के दौरान शारीरिक हिंसा तथा लगभग आधी महिलाओं ने शादी की पहली रात को ज़बर्दस्ती समागम की बात की। अधिकांश ने स्वीकारा कि वे घरेलू हिंसा खामोशी

से सहती हैं। वे इसका विरोध तब तक नहीं करती जब तक उन्हें गंभीर चोट या मौत की कगार तक नहीं पहुंचा दिया जाता।

जलने से होने वाली मृत्यु या शारीरिक तकलीफ़ों के आंकड़े सरकारी आंकड़ों से छः गुना अधिक पाए गए हैं। अंतर्राष्ट्रीय स्वास्थ्य जर्नल, *द लैंसट* में प्रकाशित प्राची सांघवी, कवि भल्ला व वीना दास के शोध अध्ययन में शहरी क्षेत्रों के लिए राष्ट्रीय अस्पतालों के रजिस्ट्री आंकड़े तथा ग्रामीण क्षेत्रों के लिए प्रतिनिधि आंकड़े उपयोग किए गए हैं जिनसे जलने से होने वाली मृत्यु व शारीरिक कष्ट की वास्तविक तस्वीर उभरती है। इन आंकड़ों के अनुसार सन् 2001 में कुल 1.63 लाख लोग जलने से मरे थे जिनमें 65% (1.06 लाख) महिलाएं थीं। इनमें से आधी महिलाओं की उम्र 15 से 34 वर्ष के बीच थी। यानी कुल 68000 शहरी तथा 95000 ग्रामीण मौतें जो जलने के कारण हुईं, उनमें बड़ी तादाद औरतों की थीं। जलने के कारणों में मुख्य दहेज व घरेलू हिंसा पाए गए हैं।

अध्ययन व आंकड़े पुनः वही दोहराते हैं जिससे हम भली-भांति अवगत हैं- विभिन्न आयामों में प्रगति के बावजूद भारत में महिलाएं सार्वजनिक व घरेलू स्तर पर हिंसा झेलती व सहती हैं। यह बंद होनी ही चाहिए।

हिंसा बंद करने की राह पर अग्रसर
- कुछ विचार

नंदिता भाटला

महिलाओं के ख़िलाफ़ हिंसा का मुद्दा नियमित रूप से हमारे समक्ष बार-बार उठ खड़ा होता है। फिर लोग मायूस होकर पूछते हैं- क्या इसका कभी अंत होगा? दुर्भाग्य से उत्तर आसान नहीं हैं। हिंसा एक ऐसा मुद्दा है जो सामाजिक ढांचों व संबंधों में गहरे पैठा है - जब तक संबंधों में असमानता व सत्ता रहेगी और समुदाय चुप्पी की चादर ओढ़े रहेंगे, जब तक संघर्ष का निपटारा बलपूर्वक होता रहेगा, हिंसा जारी रहेगी। शुरूआत करने के लिए यह एक बेहद निराशजनक हालात हैं पर हिंसा बंद करने की दिशा में अपने कदम बढ़ाते हुए हमारे लिए इन सभी कारकों को दोहराना महत्वपूर्ण है।

आजकल महिलाओं के प्रति हिंसा सार्वजनिक स्तर पर चर्चा का विषय बन चुकी है। इसका काफी श्रेय घरेलू हिंसा कानून को जाता है। इस कानून के सफल कार्यान्वयन पर ज़ोर देते हुए हम इस सच को नहीं नकार सकते कि घरेलू हिंसा को सार्वजनिक रूप से सामने लाने में यह कानून बेहद असरदार रहा है। यह महिलाओं के साथ होने वाली हिंसा से निपटने के लिए राज्य द्वारा बहु-मुखी ढांचा स्थापित करने की ज़रूरत को भी पुनः दोहराता है।

हमारे लिये भी यह महत्वपूर्ण है कि हम इस कानून के कार्यान्वयन के लिए संसाधनों के आबंटन के लिए ज़ोर देते रहें। पर दूसरी ओर हमें यह याद रखना होगा कि कानून अधिकार दिलाने का माध्यम मात्र है, इससे मानदण्डों में खुद-ब-खुद बदलाव नहीं आ सकता। औरतों के लिए अपने ही परिवार के सदस्यों को कटघरे में खड़ा करना, या हिंसक पति के साथ एक ही छत के नीचे रहना या अपना घर छोड़

देना अचानक ही आसान नहीं हो जाएगा। वह कौन सा रास्ता चुनेगी यह अभी भी उसके सामाजिक सहयोग ढांचे, आत्मविश्वास और सुरक्षित रिहाइशी जगह की उपलब्धि पर निर्भर करेगा। इसलिए औरतों के लिए सुरक्षित आश्रय के लिए संघर्ष करने के साथ-साथ हमें यह भी ज़िम्मेदारी लेनी पड़ेगी कि हिंसा दोबारा न होने पाए। यानी हिंसा के उपयोग को 'मौन स्वीकृति' देने वाले मानदण्डों को चुनौती देनी होगी।

इसके अतिरिक्त हमारा दीर्घकालीन लक्ष्य होना चाहिए पारिवारिक संबंधों में प्रजातंत्र की भावना का विकास तथा हिंसा से बचाव के लिए नियमित प्रयास। हिंसा न होने पाए इसके लिए ठोस रणनीतियां तय करनी होंगी। इसके लिए दो मुख्य बातें ज़रूरी हैं- पहला हिंसा से संबंधित खतरों व सुरक्षात्मक कारकों पर विशेष ध्यान व दूसरा, बच्चों के नज़रिये और मूल्यों के विकास पर गौर।

साहित्य में हिंसा से जुड़े खतरों व सुरक्षात्मक पहलुओं का विशेष उल्लेख मिलता है। उदाहरण के लिए बचपन में हिंसा, कठोर अनुशासन, अनियमित व लैगिंक-असमान रोज़गार संभावित खतरे तथा सामाजिक सहयोग, आर्थिक सुरक्षा (विरासत में मिला घर) सुरक्षात्मक कारक कहलाते हैं। यानी बचपन में हिंसा के साक्षी या जिनके पास सामाजिक सहयोग का अभाव हो या कठोर अनुशासन में पले बच्चे अपने जीवन में अधिक हिंसा झेलते हैं। इसलिए खतरों को कम व सुरक्षा को बढ़ावा देने वाले कारणों का विकास एक हिंसा मुक्त माहौल तैयार करने में सहायक होता है।

हिंसा को रोकने के लिए दूसरी रणनीति है मूल्यों व रिश्तों को मज़बूती प्रदान करने वाले तथा संघर्ष व द्वंद को सुलझाने वाले अहिंसक तरीकों का प्रोत्साहन। इससे न सिर्फ़ वयैक्तिक नज़रिए बदलेंगें बल्कि एक ऐसे समुदाय की रचना में मदद मिलेगी जहां हिंसा बर्दाश्त नहीं की जाएगी।

लैगिंक समानता व हिंसा जैसे अहम मुद्दों को शैक्षिक संस्थानों में गहन चर्चा का विषय बनाने से भी महत्वपूर्ण परिवर्तन की उम्मीद की जा सकती है। संस्थानों को भी जेंडर संवेदनशीलता वाले व्यवहार व कार्यप्रणालियां अपनानी होंगी जिनमें शिक्षकों का जेंडर संवेदनशील प्रशिक्षण, अनुशासन व सज़ा के तरीकों में बदलाव लाना ज़रूरी है।

हर स्तर पर सामाजीकरण द्वारा इस धारणा को चुनौती देनी होगी कि लड़कों को कुछ भी करने की आज़ादी है व लड़कियां सब कुछ खामोशी से सह लेंगी। जिस उम्र में बच्चों को झूठ न बोलने की सीख दी जाती है उसी उम्र में उन्हें हिंसा न करने से रोकना होगा।

इसी के साथ मैं एक अन्य महत्वपूर्ण बात भी दोहराना चाहूंगी जो हिंसा को वैधता प्रदान करने वाले कारकों से जुड़ी है। कई बार हम हिंसा के उपयोग को जायज़ ठहराने में लग जाते हैं। पर अगर चोट कम लगी हो या कोई वापस वार न करे या एक बार धक्का दिया गया हो तो क्या हम उसे सही मान सकते हैं? नहीं, चूंकि यह व्यवहार गलत है इसलिए उसके नतीजे, गंभीरता व बहुधा के कोई मायने नहीं रह जाते।

हमारे अपने नज़रिए पैने रहें इसके लिए जेंडर और सत्ता के गंभीर नारीवादी विश्लेषण की भी ज़रूरत है। आजकल विकास के विस्तृत फैलाव के साथ जेंडर एक समग्र धारणा बन गई है जिसकी राजनैतिक तीव्रता कम हो रही है। नारीवादियों के नाम पर लोग नाक-मुंह सिकोड़ते हैं पर हिंसा व जेंडर पर हमारा यही काम हमें इस प्रश्न का उत्तर देने में मदद करता है कि एक शराबी पति अपनी पत्नी को क्यों पीटता है? या फिर वापस जवाब देने पर पत्नी को मारना गलत क्यों होता है?

और अंत में हिंसा से जुड़े काम पर कुछ विचार पेश करना चाहती हूं। हम मानते हैं कि समुदाय व राष्ट्र स्तर पर हिंसा के प्रभावों की समीक्षा के लिए आंकड़े एकत्रित करना आवश्यक है जिससे हिंसा रोकने के लिए संसाधनों का आबंटन किया जा सके। पर दूसरी ओर यह ध्यान

भी रखना होगा कि हिंसा पर हमारे काम में महिलाओं के अधिकारो की मांग सर्वोपरि रहे और हम परिणामों में उलझ कर न रह जाएं।

पर क्या हिंसा एक गंभीर मुद्दा तभी बन सकती है जब यह बार-बार साबित हो कि महिलाओं के साथ हिंसा उनके स्वास्थ्य बच्चों व समाज पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है? ये सभी आयाम बेहद महत्वपूर्ण हैं क्योंकि हिंसा हर मुद्दे पर अपना मूलभूत प्रभाव छोड़ती है। हमें खुद को भी सचेत करने की ज़रूरत है जिससे ये सभी तर्क हमारा मकसद न बन जाएं और हमसे हिंसा का विरोध करने का हक़ छीन लें।

हिंसा के ख़िलाफ़ हमारा संघर्ष नियमित रूप से जारी रहना चाहिए जिससे सभी लोगों को हिंसा प्रतिपादित करने वाले मूल कारकों को चुनौती देने के लिए प्रेरित किया जा सके। और अंत में एक सवाल जिस पर हम सभी को गौर करना होगा- अगर हमारे गांव में कोई बैल गायों के आज़ादी से घूमने में रुकावट पैदा करता है तो हम क्या करेंगें?... गायों को बंद कर देंगे या बैल को कैद करेंगें?

कविता

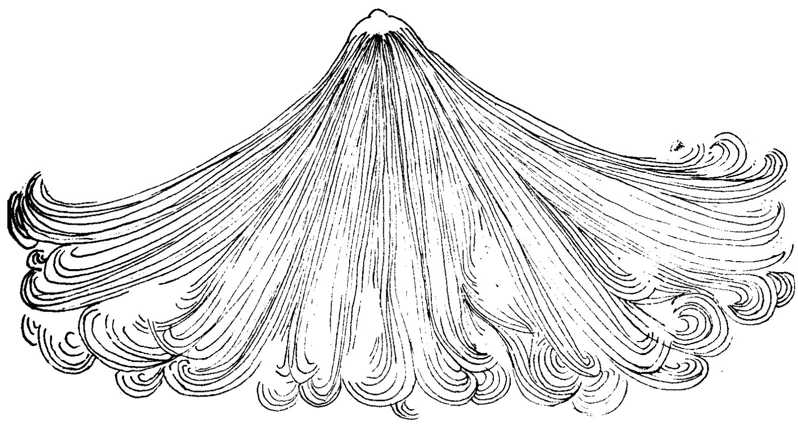

चित्र: जागोरी नोटबुक ४४ से

कुसुम का सत्याग्रह

सविता सिंह

उसके संताप का आज चौदहवां दिन है
वह कहती है नहीं छुएगी अन्न
अभी और सात दिन
नहीं बांधेगी केश।
न करेगी प्यार, न दया
न देगी दान किसी को।
स्वयं को धूल में मिला डालेगी
सब उसके लिए अब है नगण्य
वह सचमुच है मरणासन्न।

संताप के इन कठिन दिनों में
बताती है कुसुम
उसे कभी नहीं मिला भर-पेट भोजन
अक्सर बचा-खुचा ही मिला।
देखा संभ्रांत पुरुषों ने उसकी तरफ
कामवश ही अक्सर
किया उसे मजबूर, बेबस
किसी ने दया नहीं की उस पर।
उसे प्रेम कभी नहीं मिला
समझा गया उसे एक स्त्री ही
फटेहाल दुर्बल।

बाल खोले
कभी नहीं बांधने का संकल्प लिए
आत्मसंताप के आख़िरी दिन रोती
लेटी है कुसुम सत्य के आग्रह में!

'घंटी बजाओ' अभियान

अगर आपका पड़ोसी अपनी पत्नी को मार रहा हो तो आप क्या करेंगीं?

(अ) खिड़की बंद करके टीवी तेज़ कर लेंगी।

(ब) परेशान होंगी, पर आखिर यह मियां-बीबी का मामला है।

वास्तव में घरेलू हिंसा को देखकर अनदेखा कर देना सबसे आसान उपाय है। और अधिकतर लोग यही करते भी हैं। पर मुंबई की क्रिस्टीना लोबो-झा ने घरेलू हिंसा से निपटने के लिए एक तीसरा रास्ता भी सुझाया है- *घंटी बजाओ अभियान*।

अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार संगठन, *ब्रेकथ्रू* द्वारा शुरू किया गया *घंटी बजाओ अभियान* एक बेहद सीधा-साधा संदेश देता है- घरेलू हिंसा को नज़रअंदाज़ करना हमेशा गलत होता है। इसलिए उठकर जाइए और उस घर के दरवाज़े पर लगी कॉलबेल बजाइए जहां हिंसा हो रही है। पर ऐसा करके भी क्या होगा?

क्रिस्टीना बताती हैं, 'मेरी एक पड़ोसन हर हफ्ते अपने पति के हाथों मार झेलती है। पर पूरी बिल्डिंग के लोग खामोशी से अपने कान बंद करके बैठे रहते हैं। पिछले हफ्ते सुबह आठ बजे मुझे चीखने-रोने की आवाज़ें सुनाई दीं। जब पति चला गया तो आवाज़ें बंद हो गईं। शाम को आठ बजे पति के लौटने पर चीख-पुकार फिर शुरू हो गई। ऐसा रात के एक बजे तक चलता रहा। मुझसे सहन नहीं हुआ। मैंने अपने कुत्ते कैली को साथ लिया और जाकर उस घर की कॉलबेल बजा दी। उसके पति ने हम दोनों को भगा दिया पर उसके बाद मैंने चीखने-रोने की आवाज़ें उस

घर से नहीं सुनीं। मैं उम्मीद करती हूं कि यह शांति बनी रहे। पर अगर ऐसा नहीं हुआ तो मैं दोबारा घंटी बजाऊंगी और पुलिस को भी बुलाऊंगी।'

काफी लोगों के लिए किसी अजनबी का यूं घरेलू हिंसा के मामले में दखल देना इस पर खामोशी तोड़ने की दिशा में पहला कदम हो सकता है। यह इस बात का संकेत है कि लोगों को जानकारी है कि आपके घर के भीतर क्या हो रहा है और वो इसके ख़िलाफ़ कार्यवाई कर सकते हैं।

ऐसे घर की कॉलबेल दबाकर कोई भी बहाना बनाया जा सकता है। टेलीविज़न पर दिखाए जाने वाले विज्ञापन में अभिनेता बोमन ईरानी, एक घर की कॉलबेल बजाकर पूछते हैं- क्या मैं एक फोन कर सकता हूं? दूसरे ही पल उनका मोबाइल फोन बज उठता है पर हिंसक व्यक्ति के हाव-भाव से साफ झलकता है कि उसे स्पष्ट संदेश मिल चुका है।

इस विज्ञापन की एक खास बात यह है कि इसे पुरुषों पर केंद्रित किया गया है। विज्ञापन बनाने वालों का मत है कि घरेलू हिंसा के मामलों में लोग सार्वजनिक या कानूनी मदद लेने से कतराते हैं। पर पड़ोस में हो रही हिंसा पर प्रतिक्रिया ज़ाहिर करने वालों में से तकरीबन 50 प्रतिशत पुरुष होते हैं। फिर हिंसक पुरुषों को चुनौती देने के लिए पुरुषों से बेहतर भला कौन हो सकता है? पुरुषों की भागीदारी बदलाव लाने में सहायक हो सकती है। इसलिए इस अभियान को पुरुषों की ओर मुखातिब किया गया है।

राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वे के तीसरे चरण के आंकड़े दर्शाते हैं कि हर तीन विवाहित स्त्रियों में से एक घरेलू हिंसा सहती है। इसलिए यह एक ऐसा मुद्दा है जिससे मुंह नहीं फेरा जा सकता। कुछ वर्ष पहले घरेलू हिंसा कानून बनाया गया जिसने औरतों को घरेलू हिंसा से निपटने के लिए एक कानूनी रास्ता सुझाया। पर कानूनी रास्ते के साथ साथ इस मुद्दे पर एक सामाजिक प्रतिक्रिया ज़ाहिर करना भी महत्वपूर्ण हैं। यह *घंटी बजाओ अभियान* इस समस्या का सामाजिक समाधान बन सकता है।

इस अभियान को और सशक्त बनाने के लिए मोबाइल वैन, टेलीविज़न, रेडिया, अखबार व इंटरनेट जैसे माध्यमों का सहयोग लिया जा रहा है। उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक व अन्य राज्यों में *घंटी बजाओ अभियान* की मोबाइल वैन महिलाओं को इस मुद्दे पर चुप्पी तोड़ने में मदद करती है। इस अभियान से प्रेरित होकर औरतें अपने अधिकार हासिल करने के लिए सामने आ रही हैं। वे अपने अनुभव भी एक दूसरे के साथ बांटकर सशक्त महसूस कर रही हैं।

तो आगे आइए और इस अभियान को मज़बूत बनाइए। उठिए और उस घर की कॉलबेल बजाइए जहां कोई हिंसा हो रही हो। संभावना है कि आपकी इस कोशिश से सामने वाले को सबक मिल जाए। वह घबरा जाए और किसी एक महिला को हिम्मत का एहसास हो जाए। आखिर अपने ही घर में डरकर रहने की सज़ा किसी को भी क्यों भुगतनी पड़े?

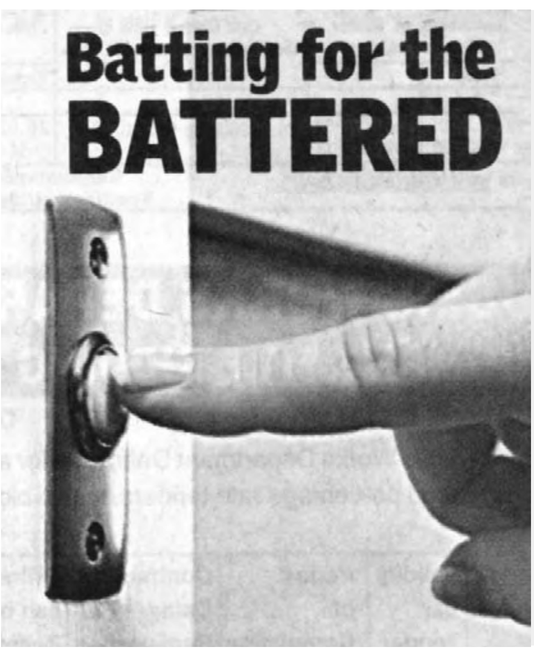

- 37% औरतों ने स्वीकारा कि वे घरेलू हिंसा सहती हैं।
- 32% औरतों ने शादी के पहले पांच वर्षों में घरेलू हिंसा झेली है।
- 55% औरतें मानती हैं कि घरेलू हिंसा के लिए वे स्वयं ज़िम्मेदार हैं।
- 41% औरतें मानती हैं कि सास-ससुर के साथ बेअदबी करने पर पति द्वारा थप्पड़ मारा जाना उचित है।
- 35% औरतें घर का काम पूरा न करने पर पति द्वारा पीटा जाना सही समझती हैं।

स्रोतः राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वे-3

फ़िल्म के एक दृश्य में रवीना टंडन

दमन

निर्माता/निर्देशक : **कल्पना लाजमी**

संगीत : **भुपेन हज़ारिका**

गीत : **माया गोविन्द**

भाषा : **हिन्दी (2001)**

महिलाओं पर घर के भीतर व विवाह संबंधों में होने वाले हिंसक व्यवहारों की फ़िल्मों में अक्सर चर्चा की जाती है। परन्तु घरेलू हिंसा, पत्नी प्रताड़ना व शोषण का मर्मस्पर्शी चित्रण कभी-कभार ही देखने को मिलता है। इस श्रृंखला में मशहूर निर्देशक कल्पना लाजमी की महिला केंद्रित फ़िल्म *दमन* को रखा जा सकता है जो मूलतः एक पत्नी के शारीरिक, मानसिक व मनोवैज्ञानिक दमन का सजीव उदाहरण है।

फ़िल्म की कहानी कुछ इस प्रकार है। दुर्गा (रवीना टंडन) की शादी असम के चाय बागान मालिक, संजय साकिया से होती है जो एक क्रूर व हिंसक पुरुष है। शादी की रात को ही दुर्गा उसे एक नौकरानी के साथ शारीरिक संबंध बनाते देखती है। ऐतराज़ करने पर संजय दुर्गा के साथ मारपीट करता है। संजय की नज़र में एक स्त्री केवल उपभोग की वस्तु है जिसका अपना कोई वजूद या सम्मान नहीं होता। इसी सोच का अनुसरण करते हुए वह अपनी पत्नी के साथ शारीरिक और मानसिक हिंसा करता है जो इस कदर उसके दिमाग पर हावी है कि वह क्रूरता की हदें पार गया है। अपने दमन को दुर्गा खामोशी से सहती रहती है। परन्तु एक रोज़ संजय दुर्गा के साथ बलात्कार करता है जिससे वह पूरी तरह टूट जाती है। इस यातनापूर्ण माहौल में उसका देवर सुनील (संजय सूरी) की उसका एकमात्र हितैषी है जो उसका दुःख-दर्द समझता है। परन्तु वह भी अपने भाई का सामना करने में असक्षम है।

दुर्गा की एक बेटी है दीपा (रायमा सेन) परन्तु संजय उसे अपनी बेटी नहीं मानता। वह दुर्गा पर सुनील के साथ नाजायज़ रिश्ता रखने का इल्ज़ाम लगाता है। संजय तेरह वर्षीय दीपा की ज़बर्दस्ती शादी कराने की कोशिश भी करता है। दुर्गा और सुनील दीपा की शादी का विरोध करते हैं। शराब के नशे में संजय सुनील को मार डालता है।

हालात से मजबूर होकर और अपनी बेटी की सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए दुर्गा और दीपा घर छोड़कर चले जाते हैं। समय बीतता है परन्तु संजय उन्हें ढूंढ निकालता है और मां-बेटी के दमन का सिलसिला पुनः शुरू हो जाता है।

पर इस बार संजय का सामना डरी-सहमी दुर्गा से नहीं बल्कि निर्भीक और सशक्त औरत से होता है जो हर कीमत पर अपनी बेटी का भविष्य संजय के हाथों बरबाद होने से रोकती है। वह नहीं चाहती कि दीपा का भी उसके जैसा हश्र हो।

इस फिल्म में निर्देशक ने पति के हाथों पत्नी व बेटी के शोषण को बखूबी उभारा है। औरत की यौनिकता और उसके समूचे अस्तित्व पर अपना नियंत्रण रखने की चाह पुरुष को कैसे अमानवीय और पशुवत बना

फ़िल्म के एक दृश्य में सायाजी शिंडे और रवीना, संजय व दुर्गा की भूमिका में

देती है यह इस फ़िल्म में दिखाया गया है। इसके साथ-साथ पितृसत्तात्मक मूल्यों और सत्ता का आपसी गठबंधन औरतों के शोषण और दमन को बरकरार रखने में किस तरह सहायता करता है यह भी दिखाने का प्रयास किया गया है।

अभिनय के लिहाज़ से रवीना टंडन ने एक प्रताड़ित महिला की भूमिका में उत्कृष्ट अभिनय किया है जो दर्शकों के मन में अपने किरदार के लिए सहानुभूति और सहयोग का एहसास जगाता है। उन्हें इस फ़िल्म के लिए राष्ट्रीय सम्मान से भी नवाज़ा गया था। कठोर हिंसक पति के किरदार में मशहूर मराठी अभिनेता सायाजी शिंडे ने बेहतरीन अभिनय किया है। दर्शकों के मन में उसके प्रति गुस्सा व नफरत का भाव उभरता है।

फ़िल्म की पटकथा में कुछ ढीलापन नज़र आता है। उदाहरण के लिए दुर्गा का एक अबला नारी से सशक्त स्त्री में परिवर्तन सहज नहीं लगता। सब तकलीफ़ों को चुपचाप सहने वाली औरत फ़िल्म के अंतिम चरण में अचानक ही दुर्गा का रूप ले लेती है, ये बात कुछ अजीब लगती है। निर्देशक ने फ़िल्म के माध्यम से हिंसा का शिकार महिलाओं की कोई संदेश या सुझाव देने का भी प्रयास नहीं किया है। पर फ़िल्म की ताकत इस बात में है कि इसमें घरेलू हिंसा, वैवाहिक बलात्कार और स्त्री दमन जैसे गंभीर विषयों को उठाया गया है। हिंसा और महिला शोषण को सार्वजनिक तौर पर जनता के बीच उठाना अपने आप में एक सराहनीय कदम माना जाना चाहिए।

-जुही जैन

भूल सुधार

पिछले अंक में प्रस्तुत कहानी 'खोल दो' के अंतिम अनुच्छेद में एक लाईन छूट गई थी जिसका कहानी के शीर्षक से महत्वपूर्ण संबंध है। इस गलती के लिए खेद है। यह अनुच्छेद पुनः प्रस्तुत किया जा रहा है।

"सराजुद्दीन के हलक से सिर्फ़ इस कदर निकल सका, 'जी मैं.....जी मैं.....इसका बाप हूं।'

डॉक्टर ने स्ट्रेचर पर पड़ी हुई लाश की नब्ज़ टटोली और सराजुद्दीन से कहा, 'खिड़की खोल दो।'

सकीना के मुर्दा जिस्म में हरकत हुई। बेजान हाथों से उसने अपना नाड़ा खोला और सलवार नीचे सरका दी। बूढ़ा सराजुद्दीन खुशी से चिल्लाया, 'ज़िंदा है- मेरी बेटी ज़िंदा है....।' डॉक्टर सिर से पैर तक पसीने में तर हो गया।

न्याय की तलाश

रोमा व राजेश पाठक

'उत्तर प्रदेश एक ऐसा राज्य है जहां महिलाओं के प्रति सबसे ज़्यादा हिंसा होती है और महिलाओं पर हिंसा का ग्राफ़ लगातार ऊपर ही बढ़ता जा रहा है', यह वक्तव्य उत्तर प्रदेश के दौरे पर आई राष्ट्रीय महिला आयोग की अध्यक्षा गिरिजा व्यास का है। इस तथ्य की सच्चाई को नकारा नहीं जा सकता क्योंकि जिस प्रदेश की मुख्यमंत्री को एक महिला व दलित वर्ग की होने के नाते भरी सभा में अपमानित किया जा सकता है वहां एक आम महिला के प्रति हिंसा का अंदाज़ा बखूबी लगाया जा सकता है।

आजकल महिलाओं पर हिंसा अत्याधिक तेज़ी से बढ़ रही है। इस हिंसा में लगभग 80 प्रतिशत हिंसा घरों में हो रही है। इसी बात को मद्देनज़र रखते हुए समाज तथा कानून ने आखिरकार घरेलू हिंसा को स्वीकारा और घरेलू हिंसा कानून बनाया गया। संयुक्त प्रगतिशील सरकार बनने के बाद संसद में कुछ ऐसे कानूनों को पारित करने की होड़ शुरू हुई है जहां पर कोर्ट-कचहरियों की दखलअंदाज़ी के लिए कोई जगह नहीं छोड़ी गई। चाहे घरेलू हिंसा कानून हो या फिर रोज़गार अधिकार, सूचना का अधिकार हो या फिर वनाधिकार कानून सभी कानूनों में आम जनता व उनके बीच काम कर रहे संगठनों को यह अधिकार दिए गए हैं कि कानूनों को अच्छी तरह से लागू किया जा सके व मामले कानूनी अदालत में फंसे न रह जाए।

हमारे परिवारों में आज भी महिलाएं घरों में अपने पति अथवा रिश्तेदारों के द्वारा उत्पीड़न की शिकार होती हैं, जिसको अब तक भारतीय दण्ड संहिता की धारा 498ए के तहत ही राहत दिलाई जाती है। परन्तु यह सिविल कानून महिलाओं के प्रति हो रही हिंसा को सम्पूर्ण रूप से रोक पाने में सक्षम नहीं है। इसलिए एक ऐसे कानून की आवश्यकता थी जो कि संविधान के अनुच्छेद 14, 15 एवं 21 के तहत महिलाओं के प्रति हो रही हिंसा को रोकने के लिये एक मज़बूत हथियार बन सके। यह कमी घरेलू हिंसा कानून ने पूरी की। यह कानून केवल पत्नियों के प्रति हिंसा ही नहीं बल्कि घर में रहने वाली बहनें, मां, विधवा औरतों व यहां तक बिना विवाह किए एक साथ रहने वाली महिलाओं के भी अधिकारों को संरक्षित करता है। इस कानून का सबसे मज़बूत पक्ष है महिलाओं के आवास की सुरक्षा करना ताकि हिंसा के चलते उसको घर से बेघर न होना पड़े। परन्तु इस कानून को महिला बनाम पुरुष के आधार पर ही देखा

जा रहा है या फिर इस कानून को घर तोड़ने वाले कानून के रूप में लिया जा रहा है, इसलिए इस कानून के बारे में कहीं भी व्यापक प्रचार देखने को नहीं मिल रहा है।

एक मानवाधिकार संगठन होने के नाते हमने उत्तर प्रदेश के सोनभद्र जिले में इस कानून की प्रगति का अध्ययन किया है जिसमें काफी चौंकाने वाले तथ्य सामने आए हैं। हमने पाया कि इस कानून के तहत केवल कोर्ट में ही मामले आए हैं।

सोनभद्र उत्तर प्रदेश के कैमूर क्षेत्र का एक बेहद ही पिछड़ा जनपद है। यहां औद्योगिक विकास तो काफी हुआ है परन्तु इस क्षेत्र में मानवाधिकार के हनन के सबसे ज़्यादा मामले दर्ज हैं। यहां के समाज में आज भी सांमती मूल्यों के अवशेष बाकी हैं। एक तरफ आधुनिकीकरण और एक तरफ वही पुरानी सांमती व्यवस्था। ऐसे में महिलाओं की स्थिति परिवार और समाज दोनों में दोयम दर्जे की है। घरेलू हिंसा के मामले यहां उच्च जाति एवं उच्च वर्ग में ज़्यादा देखे जा रहे हैं क्योंकि सम्पत्ति के झगड़े भी यहीं सबसे अधिक हैं। प्रचार-प्रसार न होने के कारण इस कानून को भी भारतीय दण्ड संहिता कानून की तरह न्यायालयों द्वारा इस्तेमाल किया जा रहा है। अधिवक्ताओं में भी इस कानून को लेकर मानसिक गतिरोध है व जब कोई महिला घरेलू हिंसा से पीड़ित न्याय के लिए अदालत आती है तो उन्हें भरण-पोषण व दहेज प्रताड़ना के तहत ही केस दर्ज करने की सलाह दी जाती है। इसमें मामला सालों साल कोर्ट में फंसा रहता है और अधिवक्ताओं को आर्थिक फायदे होते हैं। ऐसे में जो भी केस घरेलू महिला हिंसा के तहत दायर किए गए हैं वे भरण-पोषण व दहेज प्रताड़ना की धाराओं में भी दर्ज हैं। इसलिए मामले की सुनवाई लम्बी चलती रहती है।

जिला सोनभद्र में अभी तक एक भी केस संरक्षण अधिकारी के पास नहीं गया है। घरेलू महिला हिंसा कानून के तहत अब तक जितने भी मामले आए हैं उनमें केवल चार ही मामलों में सुरक्षा आदेश पारित किए गए हैं। हालांकि इन आदेशों में पीड़ित पक्ष को तुरन्त राहत मिलने की उम्मीद जागी थी किन्तु आदेश पर जनपद एवं सत्र न्यायालय में तत्काल प्रभाव से रोक लगा दी गयी है। इसके अलावा द्वितीय अपर सत्र न्यायालय ने एक आदेश को भी ख़ारिज कर दिया जो इलाहाबाद हाईकोर्ट में विचाराधीन है।

पहला मामला शशिलता श्रीवास्तव पत्नी राकेश श्रीवास्तव का है जिसका विवाह 12 मई 2007 को हुआ था। शशिलता श्रीवास्तव को उसके पति, सास व ननद द्वारा मारने, पति द्वारा शारीरिक सम्बन्ध न स्थापित करने, शरीर में करेण्ट लगाना, भोजन न देना, कीड़े पड़े आटे की रोटी खिलाना, मायके से गर्भपात कराकर आने व कभी भी मां न बनने की बात कहकर व दहेज की मांग को लेकर प्रताड़ित किया जा रहा था। इस केस में सुरक्षा आदेश के तहत पति के मकान के आधे हिस्से में रहने, पांच हज़ार रुपये प्रतिमाह खर्चा, शादी में दिए गए 9 लाख रुपये व समस्त सामान व नकदी वापस करने का आदेश दिया गया था।

दूसरा मामला बृजबाला पाण्डेय पत्नी अजीत कुमार पाण्डेय का है। इस केस में यह आदेश पारित किया गया कि पति-पत्नी व बच्चों के रहने के लिए घर व सभी सामान कपड़ों के अलावा 5 हज़ार रुपये प्रतिमाह भरण-पोषण के लिए देगा।

तीसरा मामला शकुन्तला देवी का है जिनके पति की मृत्यु दुर्घटना में हो गई थी। इसके बाद ससुर द्वारा दबाव दिया जाने लगा कि देवर के साथ शकुंतला शारीरिक सम्बन्ध स्थापित करे। इनकार करने पर शकुंतला को मारपीट कर घर से निकाल दिया गया तथा उसके बेटे को ससुर ने अपने कब्ज़े में रख लिया। कोर्ट ने ससुर को आदेश दिया कि वे शकुन्तला व उसके बेटे को रहने के लिए घर, सामान, कपड़ा, भोजन के साथ-साथ क्षतिपूर्ति की हड़पी धनराशि वापस देने के अलावा भूअभिलेख में उनका नाम दर्ज कराएं तथा भरण-पोषण के लिए एक हज़ार रुपये प्रतिमाह भी दे।

चौथा मामला अंशु का है। 27 अप्रैल 1999 को अंशु की शादी संजीव से हुई थी। ससुराल वालों ने दहेज में 15 हज़ार रुपए, स्कूटर व टीवी की मांग की। अंशु के दो बच्चे हैं तथा उसके पति की ब्लड कैंसर से मौत हो चुकी है। इस मामले में भी कोर्ट ने अपने आदेश में ससुर द्वारा अंशु व उसके बच्चों को रहने के लिए घर, भरण-पोषण के लिए ढाई हज़ार रुपये प्रतिमाह व पति के हिस्से में उसका नाम दर्ज कराने का आदेश दिया है।

इन सभी मामलों में कोर्ट ने सम्बन्धित थानाध्यक्ष को सभी सुविधाएं मुहैय्या कराने के भी आदेश दिए हैं। परन्तु ये सभी आदेश खारिज़ कर दिए गए हैं। कोर्ट के आदेश को ख़ारिज करने का आधार बगैर पति के नाम की ज़मीन, जायदाद का कागजात दाख़िल किए आदेश प्राप्त कर लेना, थानाध्यक्ष के ज़रिए सभी सुविधा मुहैय्या कराने का आदेश दिया जाना, समर्थन में पर्याप्त सबूत न होना, 125 सीआरपीसी के तहत भरण-पोषण का वाद दाख़िल किया जाना आदि को बनाया गया है।

परन्तु सवाल यह है कि इन हालातों में औरतों को न्याय कैसे मिलेगा? अगर महिलाओं के अधिकार इसी तरह कानूनी दावपेंचों और पेचिदगियों में फंसे रहेंगे तो घरेलू हिंसा से महिलाओं की सुरक्षा किस प्रकार की जा सकेगी?

कविता

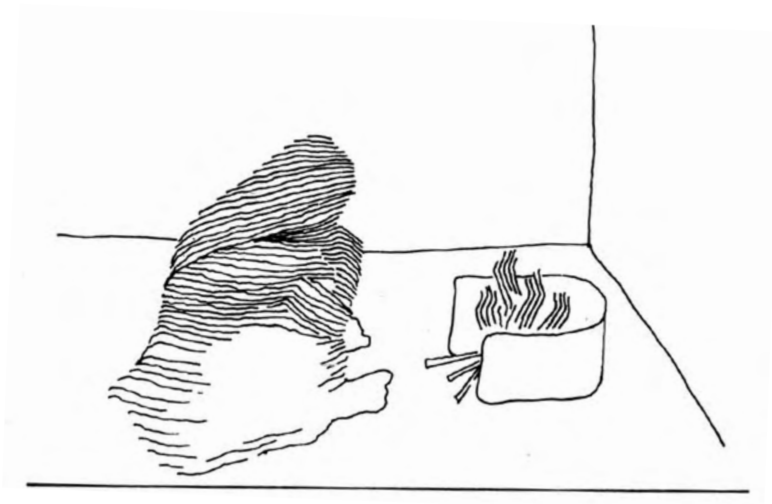

चाची

रंजना जायसवाल

ब्याह के आयीं तब लाल गुलाब थीं
जल्द ही पीला कनेर हो गई चाची
घर भर को पसंद था
उनके हाथ का सुस्वाद भोजन
कढ़ाई-बुनाई-सिलाई
सलीका-तरीका
बोली-भाषा, बात-व्यवहार
नापसंद कि दहेज कम लाई थीं चाची।

जाड़े की रात में ठंडे पानी से नहातीं।
झीनी साड़ी पहनतीं
गूंज रहे होते जब कमरे में
चाचा के खर्राटे
बेचैनी से बरामदे में टहलतीं
जाने किस आग में जलती थीं चाची।

चाचा जब गए विदेश
एक हरा आदमी उनसे मिलने आया
बचपन का साथी है- कहकर जब वे
मुस्कुराईं
मुझे बिहारी की नायिका नज़र आईं चाची।

उस दिन से चाची हरी होती गईं
दोनों सुग्गा-सुग्गी बन गए
पर जिस दिन लौटे चाचा
नीली नज़र आईं
चाची

सोचती हूं- काश, मैं दे सकती पंख
खोल सकती खिड़की दरवाज़े
उड़ा सकती सुग्गी को सुग्गे के पास।

साभार: हंस, फरवरी 2009

औरतों के ख़िलाफ़ हिंसा :
दृष्टिकोण और रणनीतियां

लेखक : **आंचल कपूर, संजय मट्टू, सुमन बिष्ट**

प्रकाशक : **कृतिः विकास के मुद्दों पर शोध कार्य, प्रशिक्षण एवं सम्प्रेक्षण टीम**

पृष्ठ : **164**

मैंने सुनी है वो ख़ामोशी तुम्हारी साफ़ साफ़...
महसूस किया है वो दर्द, वो गुस्सा
जिसे तुम्हारी आंखें बयां करती हैं...
गुज़रते देखा है मैंने तुम्हें
सच की परछाई पर से...
उस राह पर, जो तुम्हारी ज़िंदगी है
जानते हुए कि यह सिर्फ़ तुम्हारी है...
लेकिन, रहूंगी मैं वहां, तुम्हारे साथ हमेशा
उस ख़ामोशी को तोड़ने के लिए।

यह पक्तियां कृति टीम की पुस्तक *औरतों के ख़िलाफ़ हिंसाः दृष्टिकोण और रणनीतियां* के पिछले कवर पर छपी हैं। यह पुस्तक कृति टीम की अंग्रेज़ी शोध *फ्रॉम थॉट टू एक्शनः बिल्डिंग स्ट्रेटिज़ीस ऑन वायलेंस अगेस्ट विमेन* का हिन्दी अनुवाद है।

यह पुस्तक औरतों के ख़िलाफ घरेलू हिंसा के मुद्दों पर शोध का एक दस्तावेज़ीकरण है। यह शोध कृति टीम ने ऑक्सफेम ट्रस्ट के साथ मिलकर 1999 में शुरू की थी। शोध का सैम्पल काफी छोटा था - कुल आठ गांव और तीन बस्तियां इसमें शामिल थीं व भारत के नौ राज्यों- कर्नाटक, गुजरात, राजस्थान, बिहार, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल व महाराष्ट्र तथा ग्यारह गैर-सरकारी संगठनों ने इसमें हिस्सा लिया था।

मूलतः इस पुस्तक को तीन हिस्सों में बांटा जा सकता है। पहले भाग में शोध प्रक्रिया का ब्योरा है। दूसरे भाग में ज़मीनी स्तर पर हिंसा के मुद्दे पर काम कर रहे कार्यकत्ताओं, समुदाय के सदस्यों व हिंसा से जूझने वाली औरतों के अनुभवों पर बात की गई है। तीसरे भाग में हिंसा को ख़त्म करने में कारगर रणनीतियों पर विचार किया गया है।

पहली नज़र में इस पुस्तक में शोध की एक बेहद आम प्रक्रिया नज़र आती है। पर ग़ौर से देखें तो यह पुस्तक शोध प्रक्रिया के कुछ विशेष पहलुओं पर रोशनी डालती है।

- शोध प्रक्रिया सहभागितापूर्ण हैं जिसमें ग़ैर सरकारी संगठन, उनके कार्यकर्त्ता, हिंसा से जूझती औरतें सभी शामिल किए गए हैं।
- शोध के लिए एक ऐसी प्रक्रिया अपनाई गई जिससे शोध में शामिल कार्यकर्त्ताओं की सैद्धांतिक समझ विकसित की जा सके।
- यह प्रयास किया गया है कि शोध सहभागी संगठन को औरतों के ख़िलाफ़ हिंसा के मौजूदा कार्यक्रमों तथा भविष्य के नए कार्यक्रमों का एक जेंडर के नज़रिए से विश्लेषण करने में मदद करे।

पुस्तक में शामिल शोध का आधार जेंडर संवेदनशील व मानव अधिकार केंद्रित है। लेखकों का मानना है कि घरेलू हिंसा सिर्फ़ घर की चारदीवारी के भीतर घटने वाली मामूली घटना नहीं है। शोध इस तथ्य को उजागर करती है कि हिंसा दरअसल एक व्यापक तथा ढांचाबद्ध व्यवस्था का हिस्सा है जो औरत को कमतर मानते हुए एक दोयम दर्जा देती है। यह शोध इस बात को भी स्पष्ट करती है कि एक हिंसा मुक्त माहौल में रहना व सम्मान की ज़िंदगी बसर करना हर औरत का मूल अधिकार है। औरतों पर हिंसा का एक 'नार्मल' या आम रोज़मर्रा की साधारण घटना मानने वाली सोच को भी यह शोध चुनौती देती है।

इन सबके साथ साथ समाज में हिंसा की मूक स्वीकृति के मुख्य कारणों को भी इस पुस्तक में रेखांकित किया गया है जिसमें सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक सभी कारण शामिल हैं।

पुस्तक के अंत में हिंसा से जूझने के लिए रणनीतियों की बात की गई हैं। इनसे तीन मुख्य बातें सामने आती हैं:

पहली-औरतों पर किसी भी तरह की हिंसा चाहे वह छोटी हो या बड़ी, मानसिक हो या शारीरिक को जायज़ करार नहीं दिया जा सकता। दूसरा-हिंसा से निपटने का अर्थ केवल एक केस या समस्या का समाधान करना नहीं है। हिंसा का निपटारा नहीं करना है। इसे जड़ से मिटाना है। तीसरा - हिंसा से निपटने की पूरी ज़िम्मेदारी औरत की नहीं है। यानि हिंसा भी औरत सहे और उसका समाधान भी वही ढूंढे। इसलिए हिंसा को घरेलू दायरों से बाहर समाज में लाना बेहद ज़रूरी है।

हिंसा की ज़िम्मेदारी पुरुषों की है क्योंकि हिंसा करने वाले पुरुषों ने जानते-समझते हुए हिंसा का रास्ता, चुना है। हिंसा मर्द व औरत के बीच ग़ैर बराबरी के सत्ता संबंधों का ठोस प्रतीक है। हिंसा एक सामुदायिक व सामाजिक मुद्दा है जिसे जड़ से ख़त्म करने की ज़िम्मेदारी सारे समाज की है जिसमें सरकार, पुलिस, शिक्षा, संस्थान, संगठन, परिवार सभी शामिल हैं। हिंसा किसी एक व्यक्ति के रोकने से नहीं रुकती, इसके लिए सामूहिक प्रयास करने ज़रूरी है।

सारांश में यह नतीजा निकाला जा सकता है कि यह पुस्तक हिंसा पर सतत् रूप से काम करने वाले सामुदायिक कार्यकर्त्ताओं, ग़ैर-सरकारी संगठनों के कार्यकर्त्ताओं के अनुभवों को एक सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य में पेश करने का सराहनीय प्रयास है।

–जुही जैन

साभारः स्वयं, कोलकाता

जागोरी प्रकाशन

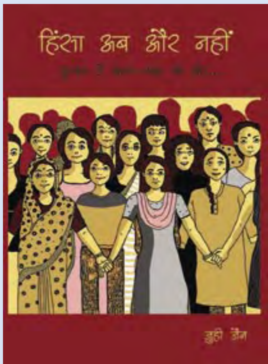

हिंसा अब और नहीं: सुरक्षा से आत्मरक्षा की ओर

महिलाओं पर हिंसा की राजनीति व समाज के पितृसत्तात्मक मानदंड़ो को चुनौती देने वाली यह पुस्तक आत्मरक्षा (लड़कियों के लिए) की अहमियत पर ज़ोर देती है। इसमें आमतौर पर होने वाली हिंसा की घटनाओं से निपटने के लिए कुछ मूल सुझाव दिये गये हैं। एक हैंडबुक के रूप में यह पुस्तक कामकाजी महिलाओं, छात्राओं, गृहणियों मे अपनी सुरक्षा की ज़िम्मेदारी के प्रति जागृति पैदा करती है।

लड़की क्या है? लड़का क्या है?

लड़की और लड़के के बीच कुछ जैविक फ़र्क़ होते हैं। पर कुछ फ़र्क़ सामाजिक और माहौल द्वारा बनाए जाते हैं। इन्ही फ़र्क़ों के ज़रिए समाज लड़की व लड़के को गढ़ने में मदद करता है। इस सरल पुस्तक में लड़के व लड़की के बीच के फ़र्क़ों और इनसे उत्पन्न असमानताओं को समझाने की कोशिश की गई है। साथ ही यह भी विश्लेषण किया गया है कि ये अंतर कुदरती या प्राकृतिक नहीं बल्कि समाज द्वारा बनाए-रचे हैं। यह पुस्तक द्विभाषी-अंग्रेज़ी व हिन्दी में है।

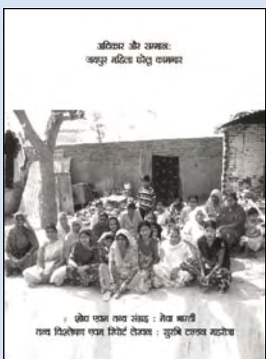

अधिकार और सम्मान:
जयपुर महिला घरेलू कामगार (शोध अध्ययन)

जयपुर में जागोरी द्वारा घरेलू कामगार महिलाओं पर शोध अध्ययन की यह रिपोर्ट महिला-काम व अधिकारों की दृष्टि से विशेष महत्व रखती है। कपड़े की फैक्टरियों में कार्यरत, घर पर पीस रेट पर काम करती, ठेले-स्टॉल लगाती और घरों में चौबीस घंटे या कुछ समय कार्यरत महिलाओं की समस्याओं व हक़ों को इस रिपोर्ट में उभारा गया है। यह रिपोर्ट अंग्रेज़ी व हिन्दी में उपलब्ध है।

नक़्शे से बाहर
दिल्ली में बेदख़ली और पुनर्वास के बाद ज़िंदगी

यह पुस्तक दो वर्ष के शोध अध्ययन का नतीजा है तथा इसमें उन 3000 परिवारों के सम्मान और जीवनयापन संघर्ष का ब्योरा है जिनका शहर के बाहर बवाना में पुनर्वास किया गया था। यह पुस्तक इन परिवारों के सामाजिक, आर्थिक और भावनात्मक शोषण तथा अपनी पहचान, हक़ और ज़िन्दगी सुरक्षित रखने के इनके प्रयासों का दस्तावेज़ है। यह पुस्तक अंग्रेज़ी में उपलब्ध है।

प्रतियां मंगवाने के लिए संपर्क करें:
महाबीर सिंह, जागोरी
दूरभाष: 011-26691219/20 • distribution@jagori.org

हम सबला के अगले अंक के लेख व कविताएं हमें भेजें। विषय है- मुसलमान महिलाओं के अधिकार।

शाँति स्थल
पारिवारिक हिंसा
गुनाह है!